30.00 Sep 2012

मरयम

इमाम मेहदी अ० का इन्तेज़ार

खुम्सः साल और ख़र्च

मुसलमानों का सुनहरी दौर

परवरिश के 3 बुनियादी उसूल

साइंस में मुसलमानों की देन

हिजाब डे

Turn Page for Gift Coupon 41

मरयम

का एक साल पूरा होने के मौक़े पर हम अपने
सब्सक्राइबर्स के लिए लेकर आए हैं

ख़ुशियों की सौग़ात

और शुरू कर रहे हैं

एक स्कीम जिसमें हर महीने 5 ख़ुशनसीबों को मिलेंगे ख़ूबसूरत ज्वैलरी सैट, घर के इस्तेमाल के सामान और भी बहुत कुछ...

बस पढ़ती रहिए मरयम मैगज़ीन और इंतेज़ार कीजिए अपनी बारी का।

**इस महीने जिन 5 ख़ुशनसीबों को
मरयम की तरफ़ से ख़ूबसूरत तोहफ़े दिये जा रहे हैं
उनके नाम यह हैं:**

Subscription ID: A-00290
Mr. Adeel Zaidi, Azamgarh

Subscription ID: A-00436
Mrs. Farah Rizvi, Lucknow

Subscription ID: A-00745
Mr. Mukarrab H. Zaidi, Muzaffar Nagar

Subscription ID: A-00266
Mr. Mahfooz Ul Hasan, Faizabad

Subscription ID: A-00785
Ms. Amreen Naqvi, Dehradun

1 ZIQADAH
Wiladat
MASOOMA-E-QUM

इमाम रज़ा अ०:

जिस शख़्स ने कुम में मासूमा अ० की ज़ियारत की वह ऐसे ही है जिसने मेरी ज़ियारत की।

RNI No: UPHIN/2012/43577

Monthly Magazine

मरयम

Vol:1 | Issue: 7 | September 2012

इस महीने आप पढ़ेंगी...

इमाम सादिक़[अ] की युनिवर्सिटी	6
मां	9
औरतों के हक़	11
तम्बाकू: सेहत का दुश्मन	13
आईडियल बीवी	14
बच्चों की परवरिश	16
इमाम मेहदी[अ] का इन्तेज़ार	18
हसद	20
इमाम अली रज़ा[अ] का अख़लाक़	22
हिजाब डे	24
5 स्टार डिश	27
यक़ीन	29
औरतों की शरीअत	30
बदगुमानी से मुक़ाबला	32
ख़ुम्सः साल और ख़र्च	34
मुसलमानों का सुनहरी दौर	36
परवरिश के 3 बुनियादी उसूल	38
साइंस में मुसलमानों की देन	40

11 ZIQADAH

Wiladat Imam RAZA a.s.

Editor
Mohammad Hasan Naqvi

Editorial Board
Nazar Abbas Rizvi
M. Fayyaz Baqir
Akhtar Abbas Jaun
Qamar Mehdi
Ali Zafar Zaidi

Managing Editor
Abbas Asghar Shabrez

Executive Editor
Fasahat Husain

Assist. Exec. Editor
M. Aqeel Zaidi

Contributors
Imtiyaz Abbas Rizwan
Azmi Rizvi
Fatima Qummi
M. Mohsin Zaidi
Tauseef Qambar

Graphic Designer
imagine graphix Siraj Abidi 9839099435

Typist
S. Sufyan Ahmad

'मरयम' में छपे सभी लेखों पर संपादक की रज़ामंदी हो, यह ज़रूरी नही है।
'मरयम' में छपे किसी भी लेख पर आपत्ति होने पर उसके खिलाफ़ कारवाई सिर्फ़ लखनऊ कोर्ट में होगी और 'मरयम' में छपे लेख और तस्वीरें 'मरयम' की प्रॉपर्टी हैं।
इसका कोई भी लेख, लेख का अंश या तस्वीरें छापने से पहले 'मरयम' से लिखित इजाज़त लेना ज़रूरी है। 'मरयम' में छपे किसी भी कंटेंट के बारे में पूछताछ या किसी भी तरह की कारवाई प्रकाशन तिथी से 3 महीने के अंदर की जा सकती है। उसके बाद किसी भी तरह की पूछताछ और कारवाई पर हम जवाब देने के लिए मजबूर नहीं हैं।
संपादक 'मरयम' के लिए आने वाले कंटेंट्स मे ज़रुरत के हिसाब से तबदीली कर सकता है।

Printer, publisher & Proprieter S. Mohammad Hasan Naqvi printed at Swastika Printwell Pvt. Ltd., 33, Cant. Road, Lucknow and published from 234/22 Thavai Tola, Victoria Street, Chowk, Lucknow 226003 UP-India

Contact No.: +91-522-4009558, 9956620017 (Lucknow), +91-9892393414 (Mumbai)
Email: maryammonthly@gmail.com

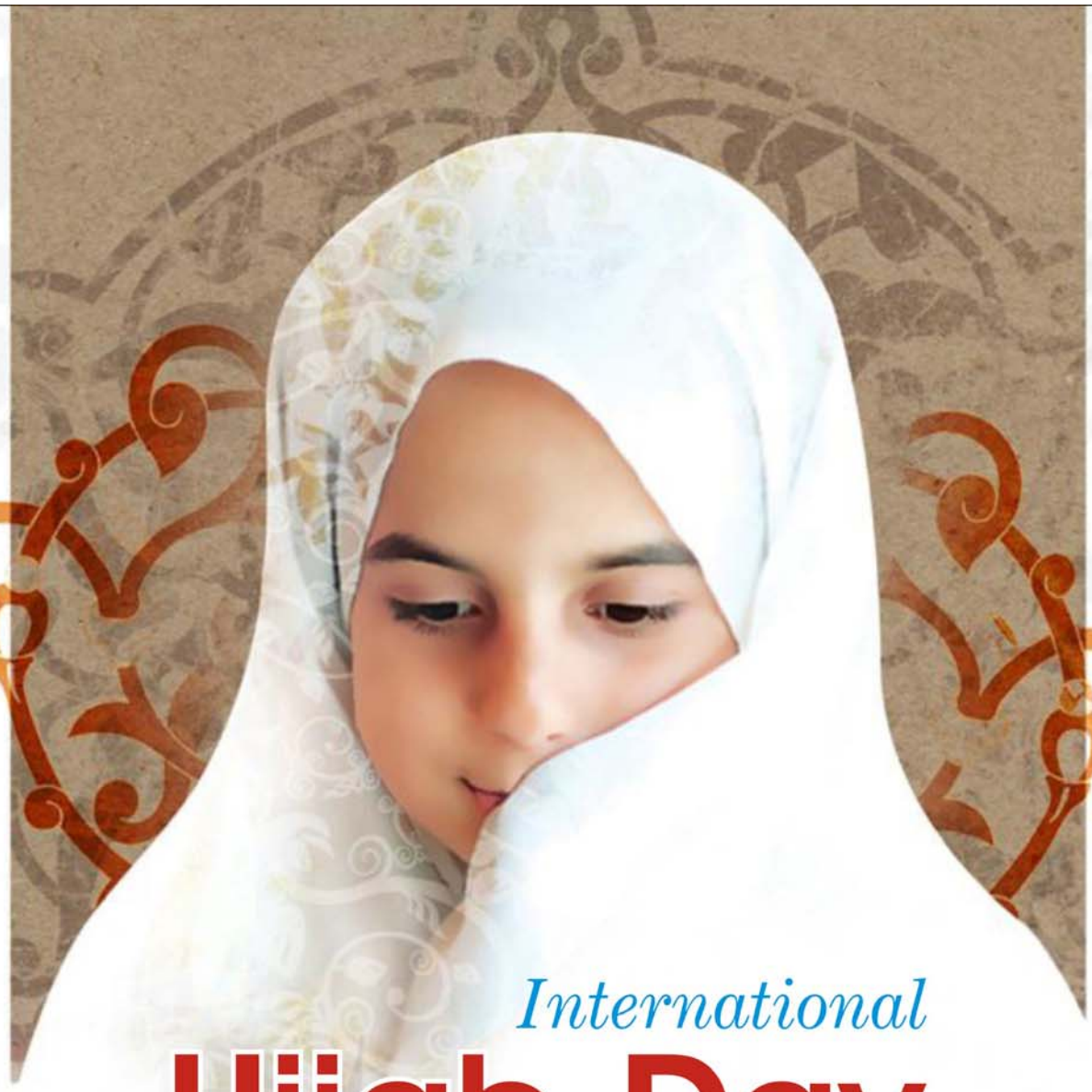

International

Hijab Day

4th September

इमाम ख़ुमैनीः

हिजाब बंधन नहीं,
बल्कि बुराईयों से बचाव है।

इमाम जाफ़र सादिक़ अ० की युनिवर्सिटी

■ डा. कल्बे सिब्तैन नूरी

25 शव्वाल इमाम जाफ़र सादिक़ अ० की शहादत का दिन है। हम इमाम की अज़मत और शहादत को सलाम करते हैं...।

इमाम जाफ़र सादिक़ अ० का ज़माना वह ज़माना था जिसमें उनको उस वक़्त के सियासी हालात की वजह से दीन के फैलाने का बेहतरीन मौक़ा मिल गया था। उस वक़्त समाज की जो इल्मी ज़रूरत थी और लोगों के अंदर जो इल्मी प्यास नज़र आ रही थी, इमाम जाफ़र सादिक़ अ० ने उस ज़रूरत को समझा और अपने वालिद के इल्मी मिशन को आगे बढ़ाया और इस शान से आगे बढ़ाया कि मदीने में आपकी दर्सगाह एक बड़ी युनिवर्सिटी में बदल गई थी।

इमाम जाफ़र सादिक़ अ० के यहाँ हर सब्जेक्ट सिखाया जाता था क्योंकि आपका दो-टूक नज़रिया यह था कि इल्म जितना आगे बढ़ेगा, दीन को उतनी ही ताक़त हासिल होगी।

बहुत से ऐसे सब्जेक्ट्स जिनसे उस ज़माने के लोग दूर भागते थे लेकिन इमाम अ० की युनिवर्सिटी में उनको भी पढ़ाया जाता था। हिस्ट्री इस बात की गवाह है कि इमाम की युनिवर्सिटी में Philosophy, Physics, Chemistry, Geography, Mathematics, Astronomy वग़ैरा पर Lectures दिये जाते थे।

इसके अलावा और भी बहुत से अलग-अलग Subjects पर भी Lectures दिये जाते और लोगों की इल्मी प्यास को बुझाया जाता था। इस युनिवर्सिटी में तालीम और इल्म की जो Quality थी उसके नतीजे में हिशाम बिन हकम, मुहम्मद बिन मुस्लिम, अबान बिन तग़लब, हिशाम बिन सालिम, मोमिने ताक़, मुफ़ज़्ज़ल बिन उमर और जाबिर बिन हय्यान जैसी मशहूर इल्मी हस्तियाँ उभर कर सामने आईं थीं। इन इल्मी शख़्सियतों के अलावा जिन उलमा, फ़ुक़हा, मुफ़स्सिरीन, मोहक़्क़िक़ीन व मोहद्दिसीन (हदीस नक़ल करने वाले) वग़ैरा को इमाम जाफ़र सादिक़ अ० ने परवान चढ़ाया, उनकी तादाद चार हज़ार से ज़्यादा है।

जिन चार हज़ार शार्गिदों ने इमाम जाफ़र सादिक़ अ० की युनिवर्सिटी से अपनी इल्मी प्यास बुझाई है वह अपने ज़माने के बड़े-बड़े उलमा और स्कॉलर माने गए हैं।

इन सभी हस्तियों ने इल्म के मैदान में बहुत बड़े-बड़े कारनामे अंजाम दिये हैं। इमाम अ० के शार्गिदों में कुछ ने तो बहुत नाम और शोहरत हासिल की थी जैसे जाबिर बिन हय्यान, जिन्होंने बहुत से Subjects ख़ासतौर पर अक़्ली व साइंसी सब्जेक्ट्स जैसे Chemistry वग़ैरा में तक़रीबन दो सौ से ज़्यादा Thesis लिखे थे। इमाम अ० के इसी शार्गिद को आज फ़ादर ऑफ़ केमिस्ट्री के नाम से याद किया जाता है।

इनकी बहुत सी किताबें यूरोप की अलग-अलग ज़बानों में छप चुकी हैं और दुनिया भर के सभी साइंटिस्टस ने जाबिर की इल्मी अज़मत को क़ुबूल किया है।

इब्ने नदीम ने अपनी किताब "अल-फ़ेहरिस्त" में जाबिर बिन हय्यान की किताबों की तादाद दो सौ बीस से ज़्यादा बताई है। इमाम अ० के ही एक और शार्गिद हिशाम बिन हकम ने तीस के क़रीब किताबें लिखी थीं।

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] की यह युनिवर्सिटी सिर्फ़ शियों ही के लिए नहीं थी बल्कि दुनिया भर के फ़िरक़ों और नज़रियों के उलमा और रिसर्च स्कॉलर्स यहाँ आते थे और अपनी प्यास बुझाते थे।

अहलेसुन्नत हज़रात के जो मशहूर इमाम हैं और दुनिया भर के सुन्नी हज़रात जिनकी तक़लीद में हैं, वह इमाम या तो खुद इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] के शार्गिद हैं या फिर आपके शार्गिदों के शार्गिद हैं।

जैसे इमाम अबू हनीफ़ा, जो सीधे इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] के शार्गिद हैं, उन्होंने दो साल तक इमाम[अ०] की शर्गिदी की थी और इन्हीं दो सालों को वह अपनी पूरी ज़िंदगी का निचोड़ मानते हुए फ़रमाते थे कि अगर वह दो साल जो मैंने इमाम सादिक़[अ०] की ख़िदमत में गुज़ारे, न होते तो नोमान बिन साबित (अबू हनीफ़ा) हलाक हो जाता।

इसी तरह इमाम मालिक भी इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] की शागिर्दी पर फ़ख़्र किया करते थे और सारी ज़िंदगी इमाम[अ०] की उस मोहब्बत व मेहरबानी को याद किया करते थे, जो इमाम मालिक से करते थे।

इमाम इब्ने हजरे अस्क़लानी जो अहले सुन्नत फ़िरक़े के बहुत बड़े आलिम हैं, उन्होंने अपनी मशहूर किताब ''तहज़ीबुत तहज़ीब'' में लिखा है,

''सुफ़यान सौरी, मालिक, इब्ने जुरैह, अबू हनीफ़ा, मूसा, वुहैब बिन ख़ालिद, कत्तान, अबू आसिम और बहुत से फ़ुक़हा व मोहद्दिसीन (हदीस का इल्म रखने वाले), इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] से इल्म लेकर हदीस बयान करते थे।''

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] अपने शार्गिदों की ज़ेहनियत और उनके इल्मी शौक़ के लिहाज़ से उनकी इल्मी परवरिश करते थे। इमाम[अ०] पहले शार्गिद के रुजहान और ज़ेहनी सलाहियत को देखते थे ताकि हदीस, तफ़सीर, कलाम या दूसरे अक़्ली व साइंसी इल्म या जिस सब्जेक्ट से उसे ज़्यादा दिलचस्पी हो, उसमें वह इल्म हासिल करके महारत ले ले।

इमाम[अ०] के पास आने वाले अलग-अलग फ़िरक़ों और नज़रियों के लोग बहस मुबाहिसे या डिबेट्स के लिए जब आते थे तो जिस सब्जेक्ट पर भी बहस करना चाहते थे, उसी सब्जेक्ट में एक्पर्ट्स इमाम[अ०] का कोई शार्गिद आगे बढ़ता और उसके सवाल या शक का जवाब दे दिया करता था।

इस युनिवर्सिटी की बुनियाद इमाम मोहम्मद बाक़िर ने डाली थी

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] के वालिद इमाम मोहम्मद बाक़िर ने ही इस तालीमगाह या युनिवर्सिटी की बुनियाद डाली थी। इमाम सादिक़[अ०] ने अपने वालिद के साथ 35 साल गुज़ारे थे। आपने अपनी जवानी के ज़माने में वह सख़्त हालात भी देखे थे जो बनी उमय्या की ज़ालिम हुकूमत की नाबूदी की वजह बने थे। आपके वालिद के ज़माने में मस्जिदे नबवी[स०] में ही अलग-अलग सब्जेक्ट्स पर लेक्चर दिये जाते थे, जिनमें दूर-दराज़ के इलाक़ों के सैकड़ों उलमा और स्कॉलर्स मौजूद रहते थे। इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] अपने वालिद की सरपरस्ती में दीनी उलूम और काएनात के राज़ों पर नज़र डालते रहे थे जो आपके वालिद ने अपने बुज़ुर्गों और उन्होंने रसूले इस्लाम[स०] से विरासत में पाए थे।

इमाम सादिक़[अ०] अपने वालिद इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ०] के साथ उनकी ज़िंदगी के आख़िरी लम्हों तक रहे और इस बीच इल्म का यह कारवाँ फ़िक़्ह, हदीस और दूसरे इस्लामी सब्जेक्ट्स को आगे बढ़ा रहा था, यहाँ तक कि 114 हिजरी में आपके वालिद की शहादत हो गई।

अब इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने दीन की रहबरी संभाली और हर इलाक़े के मुसलमान आप के पास आने लगे। दूसरी तरफ़ बनी उमय्या की हुकूमत ख़त्म होने की कगार पर थी और इस हुकूमत के मुख़ालिफ़ों को कामयाबियाँ हासिल होती जा रही थीं। इस तरह देखा जाए तो इमाम जाफ़रे सादिक़[अ०] की इमामत उस ज़माने से शुरु हुई जब बनी उमैय्या की हुकूमत आख़िरी साँस ले रही थी और बनी अब्बास की हुकूमत शुरु होने वाली थी। इस सियासी कशमकश और बनी उमैय्या व बनी अब्बास के बीच हुकूमत के सिलसिले में होने वाले ख़ून-ख़राबे और फ़ितने-फ़साद के नतीजे में इमाम सादिक़ को सुकून और इत्मिनान का ज़माना मिल गया। इन हालात का फ़ायदा उठाकर मुसलमान अपनी इल्मी प्यास बुझाने के लिए बड़ी तादाद में मदीने आने लगे और यहाँ तक कि इमाम[अ०] के पास चार हज़ार के क़रीब इल्म के चाहने वाले जमा हो गए।

इमाम सादिक़[अ०] की तरफ़ लोगों की इस जोश के साथ आने की एक और वजह यह भी थी कि बनी उमैय्या की ज़ालिम हुकूमत के ज़माने में लोगों पर अहलेबैत[अ०] के इल्म को सीखने की बहुत सख़्त पाबंदी थी। यहाँ तक कि कुछ उलमा और फ़क़ीहों का हाल यह था कि अगर उनको कोई ऐसी हदीस बयान करना होती थी जो इमाम अली[अ०] के सिलसिले से होती थी तो वह डर की वजह से इमाम अली[अ०] का नाम लेने के बजाए कह देते थे कि यह ''अबू ज़ैनब'' ने कहा है। अबू फ़रज बिन जौज़ी की किताब ''तारीख़ हसन बसरी'' में है कि जब वह इमाम अली[अ०] की कोई हदीस बयान करते थे तो इस तरह कहते थे कि ''अबू ज़ैनब ने कहा'' क्योंकि वह बनी उमैय्या के डर की वजह से इमाम अली[अ०] का नाम लेने से बचते थे। इसी तरह कुछ

उलमा कहते थे कि "शेख़ ने कहा", जबकि इससे उनकी मुराद इमाम अली[अ] होते थे लेकिन वह उनका नाम लेने की हिम्मत नहीं कर पाते थे।

बनी उमैय्या की इमाम अली[अ] से दुश्मनी का यह आलम था कि वह न तो उनसे कोई हदीस बयान करते थे और न ही उनके क़ौल से कोई फ़तवा लेते थे। अहलेबैत[अ] की हदीसों और उनकी फ़िक़ह को मिटाने के लिए बनी उमैय्या की दुश्मनी इस हद तक पहुँच चुकी थी कि उन्होंने कुछ फ़क़ीहों को ख़ुद आगे बढ़ाया और अहकाम बयान करने और फ़तवे जारी करने का काम उन्हीं पर छोड़ दिया।

मिसाल के तौर पर सुलेमान बिन मूसा और अब्दुल्लाह बिन ज़कवान जो बनी उमैय्या का एक ग़ुलाम था और अबू हुरैरा की रिवायतें बयान किया करता था। इसके अलावा और बहुत से ग़ुलाम उलमा जैसे इब्ने उमर का ग़ुलाम नाफ़े, इब्ने अब्बास का ग़ुलाम अकरमा और शहाब ज़ुहरी भी उन लोगों में शामिल थे जिनको बनी उमैय्या ने आगे बढ़ाया और उनके लिए अपने ख़ज़ाने खोल दिए लेकिन इनमें से किसी को भी अहलेबैत[अ] से हदीस रिवायत करने या फ़िक़ह और किसी दूसरे इस्लामी सब्जेक्ट पर इमाम अली[अ] या उनके बेटों में से किसी की राय के मुताबिक़ फ़तवा देने की इजाज़त नहीं थी।

इसलिए बहुत से ऐसे फ़क़ीह जो इमाम अली[अ] और उनकी औलाद की फ़िक़ह के बजाए किसी दूसरी फ़िक़ह पर एतेबार नहीं करते थे, वह लोग सख़्त तंगी का शिकार थे और फ़िक़ह के मैदान से ख़ारिज थे। इन सख़्त हालात के बाद जब इमाम जाफ़र सादिक़[अ] को मौक़ा मिल गया कि वह रसूले इस्लाम[स] के साथ-साथ इमाम अली[अ] और अहलेबैत से हदीस बयान करें और उनकी फ़िक़ह व हदीसों को फैलाएं तो हर तरफ़ और हर इलाक़े से इल्म के चाहने वाले और उलमा इमाम[अ] की ख़िदमत में हाज़िर होने लगे। इस तरह इमाम सादिक़[अ] के ज़माने में एक ऐसा इल्मी इंक़ेलाब पैदा हो गया जो तमाम इस्लामी इलाक़ों में फैल गया था। काश! मुसलमानों को रसूल[स] के बाद इमाम अली[अ] और अहलेबैत के ज़रिए इल्म और हदीसें लेने की इजाज़त होती तो आज शायद मुसलमान इतने झगड़ों का शिकार न होते!

इस तरह हम देखते हैं कि जब अहलेबैत[अ] और लोगों की बीच की रुकावटें दूर हो गईं तो तमाम शहरों और बस्तियों से मुसलमानों के गिरोह के गिरोह उस युनिवर्सिटी में आने लगे। यहाँ तक कि इल्म हासिल करने वालों की तादाद चार हज़ार तक जा पहुँची। चार हज़ार की इस तादाद को अबुल अब्बास बिन उक़दा ने अपनी किताब "मुस्तक़िल" में लिखा और शेख़ निज़ामुद्दीन ने "अल-मुअ़तबर" में इसकी ताईद की।

मोहक़्क़िक़ ने "अल-मुअ़तबर" में कहा है कि आपके ज़बरदस्त शार्गिदों ने आपकी बयान की हुई हदीसों और जवाबों की बुनियाद पर चार सौ किताबें लिखीं जो आपके बाद "उसूल" के नाम से मशहूर हुईं। कुलैनी, सदूक़ और तूसी ने अपनी किताबों यानी काफ़ी, मन ला यहज़रूहुल फ़क़ीह, अहकाम और इस्तिबसार में इन्हीं पर भरोसा किया है।

इल्मे रिजाल पर लिखी गयी शिया किताबों से ज़ाहिर होता है कि इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ] और इमाम जाफ़र सादिक़[अ] के सहाबियों ने अलग-अलग सब्जेक्ट्स पर चार हज़ार से ज़्यादा किताबें लिखी थीं।

इमाम सादिक़[अ] अपने शार्गिदों को जो कुछ बताते थे, उसको लिख लेने की बहुत ताकीद करते थे। इसलिए भी कि उस ज़माने में लिखने-पढ़ने का आम रिवाज हो गया था। यही वजह है कि उस ज़माने में इन लोगों के अलावा हदीस, सीरत, तारीख़, तफ़सीर और दूसरे सब्जेक्ट्स पर दूसरे लोगों की बहुत सी किताबें सामने आ गई थीं। अफ़सोस! इनमें से ज़्यादातर किताबें सलजूक़ियों, तातारियों व अय्यूबियों ने अपनी जंगों के दौरान उस वक़्त बर्बाद कर दीं, जब उन्होंने मकतबे वज़ीर साबूर, मकतबे तूसी बग़दाद और मकतबे क़स्रे फ़ातमी, मिस्र को तबाह कर दिया।

मकतबे मोहम्मद बिन उमैर जिसको उन्होंने हारून रशीद के डर से ख़ुद ही ज़मीन में दफ़्न कर दिया था। फिर भी हारून ने उमैर को क़ैद कर लिया था और उनका माल लूट लिया था। जब उमैर क़ैद से छूट कर आए तो वह सारी किताबें गल चुकी थीं, उनमें इमाम बाक़िर[अ] और इमाम सादिक़[अ] के शार्गिदों की सैकड़ों किताबें शामिल थीं। ●

AL-MU'AMMAL CULTURAL FOUNDATION

546/203 Near Era's Lucknow Medical College
Sarfarazganj, Hardoi Road, Lucknow-3 U.P. (India)
Ph.: 0522-2405646, 9839459672
email: muammal@al-muammal.org

MOM माँ

अनम रिज़वी

माँ लफ़्ज़ सुनते ही दिल में एक ऐसी हस्ती उभर कर सामने आती है जो ख़ुद से कहीं ज़्यादा अपने बच्चों का ख़याल रखती है, जो अपने हिस्से का खाना भी अपने बच्चों को खिला देती है, जो बच्चों की परवरिश करते-करते अपनी जवानी कब खो देती है उसे पता ही नहीं चलता, जो बच्चों की एक हंसी पर हंस दे और जो उनके दुख पर रो पड़े... उसे कहते हैं माँ। माँ ख़ुदा का एक अनमोल तोहफ़ा है, जिसके पास यह तोहफ़ा मौजूद है उसे शायद इसकी क़ीमत नहीं पता लेकिन जिसके पास माँ नहीं है वह अच्छे तरीक़े से जानता है कि माँ की हमारी ज़िंदगी में क्या अहमियत है। माँ कितनी तकलीफ़ें सहने के बाद बच्चे को इस दुनिया में लाती है और उसका चेहरा देखते ही वह अपना सारा दुख पल भर में भुला देती है और उसकी परवरिश करने में लग जाती है, अपना चैन-सुकून सब भूल जाती है, बच्चे के साथ रातों को जागती है, एक छोटी सी जान को इस क़ाबिल बनाती है कि वह इस दुनिया में हर मुश्किल का सामना कर सके। उसका अच्छे से अच्छे स्कूल में एडमिशन कराती है, सुबह बच्चे के उठने से पहले ख़ुद उठ जाती है और उसे ऐसा करते हुए ज़रा भी थकन का एहसास नहीं होता। वह उसकी परवरिश करते-करते ख़ुद तो बूढ़ी हो जाती है और उसकी औलाद जवान और तब वह नौजवान माँ की अहमियत नहीं समझ पाता। बच्चा जब लड़खड़ाता हुआ चलना सीखता है तो माँ-बाप का सहारा ढूँढता है लेकिन जब वही बच्चा जवान हो जाता है और माँ-बाप को उसके सहारे की ज़रूरत पड़ती है तो वह पीछे हट जाता है, क्या यह सही है? क्या माँ-बाप हमारे लिए बोझ हैं? किसी ने सही कहा है कि जब तक हाथ-पैर चलते हैं तब तक दुनिया साथ देती है, जब तक माँ-बाप अपने पैसों पर जीते हैं तब तक वह प्यारे मम्मी-पापा होते हैं लेकिन जब वह बूढ़े और बेसहारा हो जाते हैं तब वही माँ-बाप बोझ बन जाते हैं।

इस दुनिया में तीन तरह की औलादें पाई जाती हैं:-

(1) वह बच्चे जो माँ-बाप से सच्चे दिल से मोहब्बत करते हैं, उनकी सारी ख़ुशियों का ध्यान रखते हैं और इसके बदले कोई मुआवज़ा नहीं चाहते।

(2) जो माँ-बाप को अपने साथ तो रखते हैं लेकिन सिर्फ़ बोझ समझ कर और सोचते हैं कि अगर छोड़ दिया तो दुनिया वाले क्या कहेंगे, असल में उन्हें अपने पैरेंट्स से कोई दिलचस्पी नहीं होती।

(3) वह जो न बूढ़े माँ-बाप से मोहब्बत करते हैं न ही उनका ध्यान रखते हैं, सिर्फ़ इंतेज़ार करते हैं कि वह कब दुनिया से रुख़सत हों और सारी जाएदाद उन्हें मिले।

इन तीनों कैटेगरीज़ में पहली कैटेगरी ही बेहतर है जिसमें बच्चे अपने माँ-बाप का ध्यान बिना किसी लालच के रखते हैं। उनको दुनिया में कुछ मिले या न मिले लेकिन जन्नत में आलीशान घर ज़रूर मिलेगा क्योंकि इन बच्चों ने अपने माँ-बाप का ध्यान उस तरह रखना चाहा जैसे

सदक़ा बग़ैर माल का

जैसे ही हम "सदक़ा" लफ़्ज़ सुनते हैं फ़ौरन हमारे ज़ेहन में आता है कि माल (जो चाहे पैसे की शक्ल में हो या अनाज वग़ैरा की) निकाल कर किसी फ़क़ीर या ग़रीब को दे दिया जाए।

लेकिन सवाल यहाँ यह है कि क्या सदक़ा सिर्फ़ इसी को कहते हैं?

अगर हमारी नज़र मासूमीन[अ०] की हदीसों पर हो तो जवाब कुछ और मिलेगा। यानी सिर्फ़ माल को निकाल कर फ़क़ीरों या ग़रीबों को दे देने का नाम सदक़ा नहीं है बल्कि ऐसे दूसरे रास्ते भी हैं जो बग़ैर माल ख़र्च किए सदक़ा कहलाते हैं।

हाँ! यह ध्यान रहे कि माली मदद अपनी जगह ख़ास अहमियत रखती है और हर हालत और हर जगह इन्सान को इसका ख़याल रखना चाहिए लेकिन जो अहम बात यहाँ पर है वह यह कि सदक़ा बहुत तरह का हो सकता है।

जैसा कि रसूले ख़ुदा[स०] से नक़ल हुआ है कि आप[स०] ने फ़रमाया, "तमाम मुसलमानों को चाहिए कि हर रोज़ सदक़ा दें।" इस पर कुछ सहाबियों ने ताज्जुब से पूछा, "या रसूलुल्लाह! अगर कोई शख़्स इतना मालदार न हो तो वह क्या करे?"

रसूल[स०] ने अपनी बात को और किल्यर करते हुए कहा सिर्फ़ माल के इन्फ़ाक़ का नाम सदक़ा नहीं है बल्कि:

1- अगर रास्ते में कोई चीज़ पड़ी हो जिस से आम लोगों को परेशानी हो रही हो तो उसको रास्ते से हटाना भी सदक़ा है।

2- अगर कोई रास्ता भूल गया हो तो उसको रास्ता बताना भी सदक़ा है।

3- अगर कोई किसी बीमार की अयादत करे तो यह भी सदक़ा है।

4- अगर कोई अम्र बिल मारुफ़ करे यानी लोगों को अच्छाईयों की तरफ़ बुलाए तो यह भी सदक़ा है।

बचपन में माँ-बाप ने उनका रखा था।

दूसरी कैटेगरी के बच्चे माँ-बाप को बोझ समझते हैं और घर का एक कोना उन्हें देकर अपने आपको बहुत बड़ा समझते हैं।

तीसरी कैटेगरी के बच्चे जो सिर्फ़ लालची हैं उन्हें शायद दुनिया में तो घर मिल जाए लेकिन आख़ेरत में उनके लिए जहन्नम तैयार है।

हमें अपने परवरदिगार का शुक्र अदा करना चाहिए कि उसने हमें माँ-बाप दिए। ज़रा उन से जाकर पूछिए जो यतीम हैं और जो किसी को माँ कहने के लिए तरसते है। वह अच्छी तरह जानते हैं कि हमारी ज़िंदगी में माँ की क्या जगह है।

बूढ़े माँ-बाप को पैसों की नहीं मोहब्बत की ज़रूरत होती है। थोड़ी सी मोहब्बत से उन्हें बहुत कुछ मिल जाता है। आज-कल के बिज़ी शिड्यूल में इन्सान अपनी फ़ैमिली के साथ ज़्यादा टाइम स्पेंड नहीं कर पाता लेकिन थोड़ा टाइम अपनी फ़ैमिली के लिए निकालें और यह हमेशा याद रखें कि कि आपकी फ़ैमिली में आपके माँ-बाप भी हैं, उनके लिए टाइम ज़रूर निकालिए। हो सके तो खाना उनके साथ खाएं, इससे उन्हें अपनेपन की ख़ुशी मिलेगी जिसका अंदाज़ा आप नहीं कर सकते। माँ की दी हुई थोड़ी ख़ुशी आपको जन्नत में बहुत कुछ देगी। माँ का हमेशा एहतेराम करें, उन्हें प्यार दें और उनसे कुछ ग़लती हो भी जाए तो उसे नज़रअंदाज़ करें क्योंकि अल्लाह ने माँ से 'उफ़' तक करने को मना किया है। आप अंदाज़ा कर सकती हैं कि माँ से चिल्ला कर बात करने वाले पर कितना अज़ाब होगा। ख़ुदावंदे आलम क़ुरआने मजीद में सूरए बनी इस्राईल की 23वीं आयत में फ़रमाता है, "आपके परवरदिगार का फ़ैसला है कि तुम सब उसके अलावा किसी और की इबादत न करना और माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करना और अगर तुम्हारे सामने उन दोनों में से कोई एक या दोनों बूढ़े हो जाएं तो ख़बरदार! उन्हें उफ़ तक न कहना और उन्हें झिड़कना भी नहीं और उनसे हमेशा शरीफ़ाना बात करते रहना।"

एक बात हमेशा याद रखिए कि अगर आज आप अपने माँ-बाप के साथ ग़लत सुलूक कर रहे हैं तो कल आपके बच्चे भी आपके साथ यही सुलूक करेंगे लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होगी क्योंकि आप भी बुढ़ापे में क़दम रख चुके होंगे। अभी भी वक़्त है, अपने माँ-बाप से माफ़ी माँगें और ख़ुद से वादा करें कि आप उनके साथ ग़लत सुलूक नहीं करेंगे। माँ का दिल बहुत बड़ा होता है वह इन्शाअल्लाह माफ़ कर देगी। यह सच है कि माँ के पैरों के नीचे जन्नत है और अगर माँ न चाहे तो औलाद को जन्नत की ख़ुश्बू भी नसीब नहीं होगी। अल्लाह हम सबको माँ का एहतेराम करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए। अगर माँ हमसे राज़ी है तो हमारे रसूल हम से राज़ी हैं और अगर रसूल हमसे राज़ी हो तो हमारा ख़ुदा भी राज़ी है। ●

वीमेन राइट्स

औरतों के हक़

■ नुज़हत बाक़िरी

अगर दुनिया की हिस्ट्री पर नज़र डालें या दूसरे मज़हबों की स्टडी करें तो उसमें औरत का कोई रोल नज़र नहीं आता। हर दौर में औरतों की हैसियत मर्दों के मुक़ाबले में बहुत ही कम नज़र आती है। हर ज़माने में ऐसा ही रहा है कि उनको समाज में निहायत घटिया मुक़ाम दिया जाता था। मज़हब वाले उनको सारी बुराईयों की जड़ बताते थे और उनसे दूर रहने में अपनी ख़ैरियत समझते थे। और अगर उनसे कुछ तअल्लुक़ होता भी था तो एक नापाक और दूसरे दर्जे की मख़लूक़ की हैसियत से होता था जो सिर्फ़ मर्दों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पैदा की गई थी। यूनानी मज़हबी लिट्रेचर में एक ख़्याली औरत पेंडोरा को तमाम इंसानी मुसीबतों का ज़िम्मेदार ठहराया गया था। इसी तरह यहूदियों और ईसाइयों की मज़हबी ख़ुराफ़ात में हज़रत हव्वा[अ०] को हज़रत आदम[अ०] के जन्नत से निकाले जाने की वजह बताया गया था। औरत को बहुत ज़माने तक ऐसा समझा जाता था कि जैसे वह कोई इज़्ज़तदार मख़लूक़ न हो। यह इस्लाम ही का कारनामा है कि हव्वा की बेटी को इज़्ज़त व एहतेराम के क़ाबिल बनाकर पेश किया और उसको मर्द के बराबर राइट्स दिए गए। बल्कि हक़ीक़त तो यह है कि इस्लामी हिस्ट्री की शुरूआत ही औरत के ज़बरदस्त रोल से होती है।

इस्लाम की शुरुआत हज़रत ख़दीजा की बेमिस्ल क़ुरबानियों से होती है। उस वक़्त कमज़ोर समझी जाने वाली औरत हिम्मत और हौसले की मिसाल बन कर ख़ुदा के रसूल का सहारा बन जाती है। जब पहली वही नाज़िल हुई और ग़ारे हिरा से निकल कर हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] घर तशरीफ़ लाए तो घबराहट और परेशानी के साए आपका पीछा कर रहे थे मगर सैय्यदा ख़दीजा अपने शौहर की पाकबाज़ी, बुलंद अख़्लाक़ और इन्सान दोस्त किरदार की गवाह बन कर नुबूव्वत पर सबसे पहले ईमान ले आईं और फ़रमाया, "ऐ सच्चे और अमानतदार! अल्लाह तआला आप जैसे बुलंद किरदार को कभी परेशानी और घबराहट के सायों के सुपुर्द नहीं करेगा।" उन्होंने अपना वक़्त, माल और जान सब कुछ इस्लाम पर निछावर कर दिया।

एक औरत का मुक़ाम देखना है तो फिर अल्लाह के अज़ीम बंदे हज़रत इब्राहीम[अ०] की फ़रमांबरदार बीवी हज़रत हाजरा को देखें। उन्होंने अल्लाह और अपने शौहर के हुक्म की ख़ातिर रेगिस्तान में रहना क़ुबूल कर लिया था। फिर जब वह इस्माईल[अ०] के लिए पानी की तलाश में सफ़ा और मरवा के बीच दौड़ीं तो अल्लाह ने उनकी फ़रमांबरदारी और ख़ुलूस की क़द्र करते हुए, उनके इस अमल को क़यामत तक के लिए सारे मर्दों और औरतों पर वाजिब कर दिया।

रसूल अल्लाह[स०] के ज़माने में मुस्लिम औरतों ने ज़िंदगी के हर मैदान में भरपूर रोल अदा किया था। इल्म सीखने-सिखाने का मैदान हो या समाजी ख़िदमतों का मैदान, अल्लाह की राह में जिहाद का मौक़ा हो या सियासत व हुकूमत के मामलात हों, सब में औरतों का साफ़ और अहम रोल होता था।

रसूल अल्लाह[स॰] की मजलिस में औरत और मर्द सब एक साथ शरीक होते थे और दीन की बातें पूछते और समझते थे। जब औरतों ने नबी[स॰] से शिकायत की कि औरतों के बारे में कुछ बातें ऐसी होती हैं जो हम अपने बाप-दादा और भाईयों की मौजूदगी में नहीं कर सकते तो रसूल अल्लाह[स॰] ने औरतों के लिए एक दिन अलग से ख़ास कर दिया जिसमें मर्द शरीक नहीं होते थे। इस तरह औरतें हफ़्ते में छः दिन मर्दों के साथ और एक दिन अलग से हाज़िर होकर अपने मसाएल का हल पूछती थीं। इससे पता चलता है कि रसूले इस्लाम[स॰] के नज़दीक औरतों की एजुकेशन और तरबियत मर्दों से भी ज़्यादा अहम थी।

ख़ास हालात, जैसे मैदाने जंग में मुस्लिम औरतें, मुजाहिदों को पानी पिलाती थीं, ज़ख़्मियों की मरहम-पट्टी करती थीं और इस नेक काम में किसी बड़े या छोटे का फ़र्क़ नहीं होता था। इसी तरह पढ़ने-पढ़ाने, तालीम को फैलाने और हदीस की रिवायत में शुरू के दौर की मुस्लिम औरतों ने भरपूर रोल अदा किया था।

इस्लाम ने औरत और मर्द के कामों को अलग-अलग करके औरत को घर के अंदर इज़्ज़त व एहतेराम का रुतबा दिया है। चूंकि मर्द पैदाईशी ऐतबार से जिस्मानी तौर पर मज़बूत होता है, इसलिए इस्लाम ने कमाने-धमाने की तमाम ज़िम्मेदारी मर्द के ज़िम्मे करके घरेलू मामलात को औरत के सुपुर्द किया है। अल्लाह ने मर्द को फ़ैसले की ताक़त दी है और क्योंकि कोई भी सिस्टम किसी लीडर या मैनेजर के बग़ैर नहीं चल सकता, इसलिए घर के मामलात में मर्द को हाकिम बनाया गया है। इसके अलावा बाक़ी तमाम मामलात में औरत को मर्द के बराबर राइट्स दिए गए हैं। क़ुरआने मजीद में है, ''औरतों के लिए वैसे ही हक़ भी हैं जैसी ज़िम्मेदारियां हैं।''

अल्लाह तआला ने क़यामत के दिन जज़ा और सज़ा के मामले में भी औरत और मर्द को बराबर रखा है, ''मर्दों के लिए वह हिस्सा है जो उन्होंने कमाया है और औरतों के लिए वह हिस्सा है जो उन्होंने हासिल किया है।''

इस्लाम बग़ैर किसी रुकावट के औरत को इस बात की इजाज़त देता है कि वह हर तरह के माली मामलों जैसे कोई भी कारोबार या बिज़नेस कर सकती है और वह जो कुछ कमाएगी वह उसका अपना होगा, जैसा कि क़ुरआने मजीद में है, ''मर्दों के लिए वह हिस्सा है जो उन्होंने कमाया है और औरतों के लिए वह हिस्सा है जो उन्होंने कमाया है।''

पश्चिमी मुल्कों ने औरत को मादर पिदर आज़ादी देकर उस पर ज़ुल्म किया है। उस पर घर और घर के बाहर दो बड़ी ज़िम्मेदारियां डाल दी हैं। इसके उलट इस्लाम ने औरत को इज़्ज़त और एहतेराम का मुक़ाम दिया है। उसको माँ बनाकर जन्नत का सरचश्मा, बहन बनाकर ईसार व क़ुरबानी, मुहब्बत और उलफ़त का पैकर, बेटी बनाकर अल्लाह की रहमत और बीवी बनाकर राहत व सुकून का ज़रिया क़रार दिया है। इस्लाम ने घर के अंदर रह कर आने वाली नस्लों के किरदार व अख़्लाक़ की तामीर औरत के हाथ में दी है। यह एक ऐसी अज़ीम ज़िम्मेदारी है जो किसी क़ौम के बाक़ी रहने और उसकी मज़बूती की पहली शर्त है। दुनिया में वही क़ौम अपना वुजूद बाक़ी रख सकती है जिसकी औरतें किरदार व अख़्लाक़ की बुलंदियों पर हों और इल्म व अख़्लाक़ के ज़ेवर से सजी एक बुलंद किरदार नस्ल दुनिया को दें। ●

सूरए फ़ातिहा

मरहूम

एस.एम.मेंहदी (हनी)

इब्ने एस. एम. सिकन्दर के लिए सूरए फ़ातिहा की गुज़ारिश है।

- सिराज आब्दी

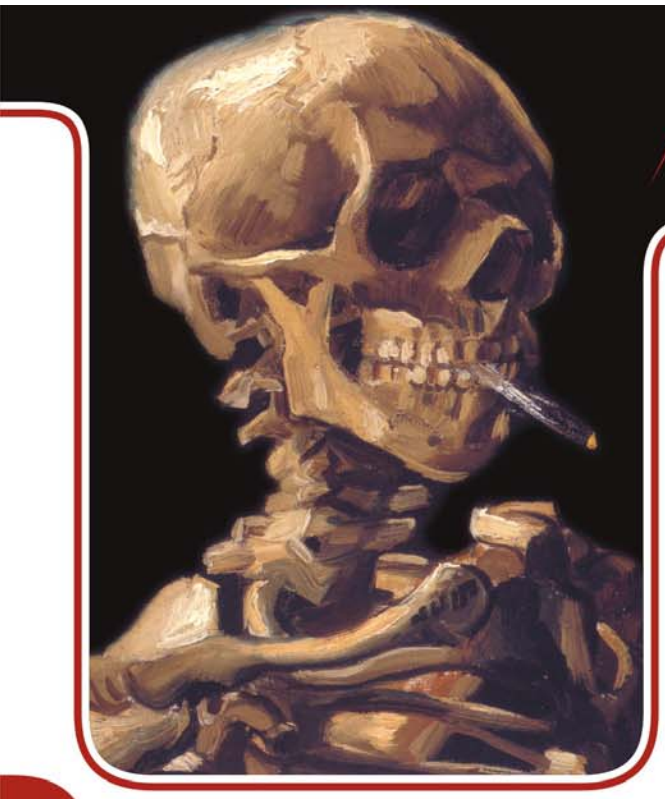

TOBACCO

तम्बाकू सेहत की दुश्मन

सै. आले हाशिम रिज़वी
aleyhashim@yahoo.co.in

मरयम अगस्त 2011 के इशू में ''नशे की आदत, ज़िल्लत और हलाकत'' के उनवान से मैंने एक आर्टिकल लिखा था। जिसमें मैंने शराब की ख़राबियों का ज़िक्र किया था। यह सही है कि शराब की तरह तम्बाकू को इस्लाम ने हराम क़रार नहीं दिया है। लेकिन नुक़सानदेह चीज़ों से दूर रहने की इस्लाम ने साफ़ तौर पर हिदायत की है।

क़ुरआने मजीद की सूरए बक़रा की आयत 195 में यह किल्यर हुक्म है कि ''अपने हाथों से अपने आप को हलाकत में न डालो।'' जबकि तम्बाकू से बनी चीज़ों जैसे कि सिगरेट, गुटखा और पान मसाले के पैकटों पर यह लिखा होता है इसका इस्तेमाल सेहत के लिए नुक़सानदेह है। फिर भी इन चीज़ों का इस्तेमाल जानबूझकर खुद को हलाकत में डालना ही तो है। इसलिए तम्बाकू का इस्तेमाल हराम न सही लेकिन इस्लाम की नज़र में एक ग़ैर मुनासिब अमल ज़रूर है। इसके अलावा इस्लाम ने फ़ुज़ूलख़र्ची को भी बहुत नापसंद किया है। क़ुरआन में फ़ुज़ूलख़र्ची करने वालों को शैतान का भाई बताया गया है। अब अगर इस प्वाइंट ऑफ़ व्यु से देखा जाए तो सिगरेट, गुटखा और पान मसाले वग़ैरा पर पैसा ख़र्च करना सरासर फ़ुज़ूलख़र्ची है। लेकिन अफ़सोस और हैरानी की बात है कि इस तरह की फ़ुज़ूलख़र्ची सिर्फ़ कम पढ़े-लिखे या बेदीन लोग ही नहीं करते बल्कि लिटरेट और मज़हबी लोग भी इस फ़ुज़ूलख़र्ची का शिकार हैं।

आपको जानकर हैरानी होगी कि पूरे वर्ल्ड में एक साल में लगभग 60 लाख मौतें तम्बाकू के इस्तेमाल की वजह से होती हैं। मेडिकल साइंस के मुताबिक़ मुँह, फेफड़े और गले के कैंसर की सबसे बड़ी वजह तम्बाकू का इस्तेमाल है। साँस का फूलना, सीने में दर्द होना, लगातार खाँसी आना, खाना खाने में दिक़्क़त पेश आना और मुँह में छाले निकलना वग़ैरा इस आदत की वजह से होने वाली जनरल प्रॉब्लम्स हैं। WHO की एक रिसर्च रिर्पोट के मुताबिक़ दिल की बीमारियों और ब्लड प्रेशन के मरीज़ों की तादाद बढ़ने का रीज़न भी तम्बाकू का बढ़ता इस्तेमाल है। सिगरेट और बीड़ी पीने वाले जैसे ही कश लेते हैं तम्बाकू का धुआँ हलक़ के रास्ते फ़ेफ़ड़ों में उतर जाता है। उसी वक़्त स्मोकिंग की वजह से निकोटीन ख़ून में शामिल हो जाता है। जिससे हार्ट और ब्लड प्रेशर दोनों इन्फ़ेक्टेड हो जाते हैं। अक्सर लोग हुक़्क़े का इस्तेमाल सिगरेट और बीड़ी के मुक़ाबले सेफ़ समझते हैं। जबकि मेडिकल एक्सपर्ट ऐसा नहीं मानते हैं उनके मुताबिक़ हुक़्क़ा पीना भी कम नुक़सानदेह नहीं है। तम्बाकू की बुरी आदत से औरतें भी दूर नहीं हैं। पान के ज़रिए तम्बाकू खाने वाली औरतों की एक बड़ी तादाद है।

तम्बाकू की आदत धीरे-धीरे एक नशे जैसी शक्ल ले लेती है। जिसे छोड़ना काफ़ी मुश्किल हो जाता है। लेकिन ऐसा भी नहीं है कि इस बुरी लत से छुटकारा पाया न जा सके। इस मामले में पक्के इरादे के साथ कोशिश करना बहुत ज़रूरी हैं। कुछ ऐसे तरीक़े हैं जिनकी मदद से इस 'धीमे ज़हर' की ख़तरनाक आदत को छोड़ा जा सकता है। जैसे कि तम्बाकू की तलब लगने पर उसकी जगह सौंफ़, नारियल, इलायची या च्यूइंगम वग़ैरा चबाई जा सकती है। अपने दिमाग़ को किसी काम में बिज़ी करके तलब को टाला जा सकता है। तम्बाकू और स्मोकिंग छोड़ने पर अकसर लोगों को शुरु में थोड़ी परेशानी ज़रूर होती है। जिसे डॉक्टर 'विडॉल सिन्ड्रोम' कहते हैं। लेकिन यह परेशानी बस कुछ ही दिन रहती है, बाद में सब कुछ नार्मल हो जाता है।

आख़िर में अपने आर्टिकल के ज़रिए मैं ख़ास तौर से नौजवान लड़के-लड़कियों से अपील करता हूँ कि वह खुद को इस जानलेवा आदत से बचाए रहें। हमारी ज़िंदगी अल्लाह की बख़्शी हुई एक अज़ीम नेमत है जिसकी हिफ़ाज़त करना हमारा फ़र्ज़ है। तम्बाकू हमारी सेहत का दुश्मन है। इससे सिर्फ़ खुद को ही नहीं बल्कि दूसरों को बचाना भी बेहद ज़रूरी है। यही वजह है कि पब्लिक प्लेस पर स्मोकिंग करना मना है। 'हेल्थ इज़ वेल्थ' की पॉलीसी पर अमल करते हुए 'तम्बाकू की आदत, बीमारियों को दावत' का स्लोगन याद रखें तभी आपकी लाइफ़ हैप्पी और हेल्दी रहेगी। अभी हाल में ही हमारे मुल्क के दो स्टेट बिहार और महाराष्ट्र में तम्बाकू पर बैंड लगा दिया गया है। लेकिन इस तरह की पाबंदी लिमिटेड टाइम के लिए होती है। तम्बाकू से बनी चीज़ों को बिज़नेस करने वाली कम्पनियों के प्रेशर में आकर गर्वनमेंट पाबंदी हटा लेती है। काश ऐसी नुक़सानदेह चीज़ों पर पूरे वर्ल्ड में लाइफ़टाइम बैंन लगाया जा सकता। ज़ाहिर है यह मुमकिन नहीं है, लेकिन खुद को तम्बाकू की आदत से दूर रखकर अपनी सेहत को सेफ़ ज़रूर रखा जा सकता है।

आईडियल बीवी

मासूमीन[स०] की हदीसों के मुताबिक़

■ फ़ातिमा कुम्मी

बेहतरीन बीवी

रसूले इस्लाम[स०] फ़रमाते हैं, "बेहतरीन बीवी वह है:

1- जिसकी औलाद ज़्यादा हो।

2- जो मेहरबान हो।

3- जो पाकदामन हो।

4- जो अपने रिश्तेदारों में इज़्ज़त की निगाह से देखी जाती हो।

5- जो शौहर के सामने अकड़ कर न रहती हो।

6- जो अपने शौहर का कहना मानती हो।"

हज़रत अली फ़रमाते हैं, "ऐसी औरतें अल्लाह की तरफ़ से ख़ास कर भजी गई हैं जो:

1- शौहर से मोहब्बत करने वाली हों।

2- औलाद से प्यार करने वाली हों।

3- तेज़ तर्रार न हों।

4- नर्म मिज़ाज हों।

5- शौहर के नाराज़ होने पर, जब तक उसे मना न ले तब तक चैन से न बैठें।

6- उन्हें देख कर शौहर खुश हो जाएं।

7- घर के कामों को ख़ूब अच्छी तरह से जानती हों।

8- फ़ालतू ख़र्च न करती हों।

9- शौहर के पीछे भी उसकी इज़्ज़त पर आंच न आने देती हों।"

"नेक बीवी, बड़ा घर और तेज़ रफ़्तार सवारी, सआदतमंदी के सामान हैं।"

"नेक बीवी लिबास की तरह है जो इंसान के ऐबों को छिपाती है।"

"सबसे ज़्यादा बरकत वाली औरत वह है जिसकी शादी और ज़िंदगी के ख़र्चे कम हों।"

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने फ़रमाया है, "इन्सान की बीवी उसकी गर्दन में एक तौक़ की तरह है इसलिए यह देखना ज़रूरी है कि किस तरह का तौक़ पहनाया जा रहा है।"

आप[अ०] ही ने फ़रमाया, "औरतों में बेहतरीन औरत वह है कि अगर तुम उसको माल दो तो वह शुक्रिया अदा करे और अगर किसी वजह से न दो तो नाराज़ न हो।"

आपने एक और जगह फ़रमाया है, "तुम्हारी औरतों में से बेहतरीन औरत वह है जो ख़ुश्बू लगाने और खाना पकाने के लेहाज़ से अच्छी हो, ख़र्च करने की जगह पर ख़र्च करे और जहाँ हाथ रोकना हो वहाँ हाथ रोके। ऐसी ही औरतें ख़ुदा की तरफ़ से ख़ास काम के लिए भेजी गई हैं और ख़ुदा वाले कभी नाउम्मीद और शरमिंदा नहीं होते।"

एक दिन रसूले ख़ुदा[स०] ने पूछा, "बताओ औरतों के लिए सबसे अच्छी क्या चीज़ है?" जनाबे फ़ातिमा ज़हरा[स०] ने फ़रमाया, "वह मर्दों को न देखें और मर्द उन्हें न देखें" इस जवाब से रसूले ख़ुदा[स०] बहुत ख़ुश हुए और फ़रमाया, "फ़ातिमा मेरा टुकड़ा है"।

रसूले ख़ुदा[स०] फ़रमाते हैं, "बरकत वाली बीवी वह है जिसके ख़र्चे शौहर के लिए कम हों।"

सबसे बुरी औरत

रसूले इस्लाम[स०] ने फ़रमाया है कि सबसे बुरी औरत वह है जो:

1- अपने रिश्तेदारों में बदनाम हो।

2- शौहर के सामने अपनी बड़ाई करती हो।

3- जिसके अंदर हसद भरा हुआ हो।

4- बुरी आदतों की शौक़ीन हो।

5- शौहर के पीछे सज-संवर कर रहती हो।

6- शौहर की तरफ़ से लापरवाह हो।

7- शौहर की बातों पर ध्यान न देती हो।

8- न शौहर की मजबूरी को समझती हो और न उसकी ग़लती को माफ़ करती हो।

9- सफ़ाई पर ध्यान न देती हो।

10- बद-तेहज़ीब और शौहर का कहना न मानने वाली हो।

11- ख़ानदान में तो बदनाम हो लेकिन ख़ुद

अपने आपको इज़्ज़तदार समझती हो।

12- अपने शौहर का हुक्म तो न मानती हो लेकिन दूसरों की बातों को मान लेती हो।

एक वाक़िआ

रसूले इस्लाम[स०] ने फ़रमाया, "जिस रात मुझे मेराज पर ले जाया गया उस रात मैंने अपनी उम्मत की औरतों में से कुछ को बहुत सख़्त अज़ाब में देखा जिन्हें देखकर मुझे रोना आ गया।

1- मैंने एक औरत को देखा कि उसको सर के अगले हिस्से के बालों से जहन्नम में लटकाया गया था और अज़ाब की सख़्ती की वजह से उसका मग़्ज़ खौल रहा था।

2- मैंने एक औरत को देखा कि उसकी ज़बान जहन्नम की दीवार से चिपकी हुई थी और खौलता हुआ पानी उसके मुँह और हलक़ में डाला जा रहा था।

3- मैंने एक औरत को देखा जो पैरों के बल जहन्नम में लटकी हुई थी।

4- मैंने एक औरत को देखा जो ख़ुद अपने बदन का गोश्त खा रही थी और उसके गोश्त से आग निकल रही थी।"

जनाबे फ़ातिमा ज़हरा[स०] ने कहा, "बाबा जान! यह बताईए कि दुनिया में इन औरतों ने ऐसा क्या किया था जिसकी वजह से उन पर इतना सख़्त अज़ाब हो रहा था?"

1- "रसूले अकरम[स०] ने फ़रमाया, "वह औरत जिसके बाल जहन्नम की दीवार से बाँध दिए गए थे वह अपने सर के अगले हिस्से के बालों को नामहरमों से नहीं छुपाती थी।

2- जिस औरत की ज़बान दीवार से चिपकी हुई थी वह अपने शौहर को ज़बान से ज़ख़्म लगाती थी।

3- जो औरत अपने दोनों पैरों के बल जहन्नम में लटकी हुई थी वह अपने शौहर की इजाज़त के बग़ैर जहाँ चाहती थी चली जाती थी।

4- जो औरत अपना गोश्त खा रही थी और जिसके गोश्त से आग निकल रही थी वह शौहर के अलावा दूसरों के लिए सिंगार करती थी और नामहरमों को दिखाती फिरती थी।"

रसूले ख़ुदा[स०] अपनी दुआओं में कहते थे, "ए ख़ुदा! मैं तुझसे पनाह माँगता हूँ उस माल से जो बेफ़ायदा हो, उस बीवी से जो मुझे वक़्त से पहले बूढ़ा कर दे और उस साथी से जो मुझे धोखा दे।"

रसूले ख़ुदा[स०] ने फ़रमाया है, "बीवी पर शौहर का हक़ यह है कि वह शौहर का कहना माने।"

"जन्नत सबसे ज़्यादा उस औरत के इंतेज़ार में है जो औलाद वाली हो और मेहरबान हो। अगर उसका शौहर नाराज़ हो जाए या उसको कोई तकलीफ़ पहुंचाई हो तो वह उसके पास आए और कहे, "जब तक आप राज़ी नहीं हो जाते मुझे नींद नहीं आएगी।"

"जब तक औरत ने शौहर का हक़ अदा नहीं किया, उस वक़्त तक उसने अल्लाह का हक़ अदा नहीं किया।"

इमाम सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं, "मोमिन का सबसे बड़ा दुश्मन उसकी बदअख़लाक़ बीवी है।"

मेकअप

इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ०] ने फ़रमाया है, "औरत के लिए ज़ेवर के बग़ैर रहना ठीक नहीं है, चाहे गर्दन में एक हार ही क्यों न हो। और यह भी ठीक नहीं है कि औरत का हाथ ख़ाली हो चाहे सिर्फ़ मेहंदी ही क्यों न लगी हो।"

"शौहर के अलावा किसी दूसरे के लिए

सिंगार मत करो।"

"औरत सिर्फ़ अपने शौहर के लिए सज-संवर सकती है।"

औरत और मर्द की ग़ैरत

रसूले ख़ुदा[स०] ने फ़रमाया है, "ख़ुदा क़यामत के दिन उस शख़्स की तौबा और फ़िदया क़ुबूल नहीं करेगा जो अपनी बीवी को ग़ैर मर्दों से मिलने-जुलने से न रोके।"

हज़रत अली[अ०] ने फ़रमाया है, "औरत की ग़ैरत यानी शौहर को दूसरी बीवी के साथ न देख सकना ख़ुदा के हुक्म की मुख़ालिफ़त करने के बराबर है। जबकि मर्द की ग़ैरत यानी अपनी बीवी को नामहरम के साथ न देख सकना ईमान है।"

शौहर की इजाज़त

रसूले ख़ुदा[स०] फ़रमाते हैं कि अगर बीवी शौहर की इजाज़त के बग़ैर घर से निकल जाए तो आसमान व ज़मीन के फ़रिश्ते उसके वापस आने तक उस पर लानत करते रहते हैं।

घर के काम

रसूले ख़ुदा[स०] ने फ़रमाया है, "एक नेक औरत हज़ार बुरे मर्दों से बेहतर है। कोई औरत सात दिन तक अपने शौहर की भलाई के लिए परेशानी उठाए तो ख़ुदा उस पर जहन्नम के सात दरवाज़े बंद और जन्नत के सात दरवाज़े खोल देता है।"

"अगर कोई औरत अपने शौहर को एक घूँट पानी पिलाए तो उसे एक साल की इबादत का सवाब मिलेगा।"

बच्चों की दीनी परवरिश

■ ज़ैनब बुतूल

माँ-बाप के ज़िम्मे बच्चों का एक बड़ा ही अहम काम उनकी दीनी तालीम और परवरिश है। जो माँ-बाप तालीम व तरबियत को समझते हैं वह जानते हैं कि अच्छी तालीम व तरबियत का बेहतरीन मौक़ा बचपन और लड़कपन का ज़माना होता है। जो तालीम इस नाज़ुक दौर में बच्चे को दी जाएगी वह उसकी रूह पर अपना पूरा असर छोड़ देगी और उसके वजूद का हिस्सा बन जाएगी यानी जो इल्म बचपन में सिखाया जाए वह पत्थर की लकीर बन जाता है।

इसी तरह से जो माँ-बाप अपनी और अपने बच्चों की कामयाबी चाहते हैं उनके लिए ज़रूरी है कि वह अपने बच्चों को बचपन ही से इस्लामी टीचिंग्स की जानकारी दें और उनकी ज़ेहनी और रूहानी सलाहियत के मुताबिक़ उन्हें अक़ाएद और दीनी इबादतों के बारे में बताएं।

उम्र के ऐतबार से लड़कियां नौ साल और लड़के पंद्रह साल की उम्र में बालिग़ हो जाते हैं और उन पर शरई एहकाम वाजिब हो जाते हैं लेकिन दीनी फ़रीज़ों की अदायगी को बालिग़ होने पर नहीं टाला जा सकता बल्कि बचपन ही से इबादत करने की आदत डालनी चाहिए ताकि बच्चे बालिग़ होने के बाद शौक़ से उनको बजा लाएं। ख़ुशकिस्मती से एक मज़हबी घराने में परवरिश पाने वाला बच्चा कम उम्री ही में अल्लाह एक, पंजतन पांच वग़ैरा सीख जाता है और तीन-चार साल की उम्र ही से अपने मां-बाप की नक़ल में तसबीह करने लगता और जानमाज़ बिछाने के अलावा सजदे में भी जाने लगता है। समझदार पैरेंट्स ऐसे मौक़े पर मुस्कुरा कर उसका हौसला बढ़ाते हैं। अगर इन कामों के लिए बच्चे पर ज़बरदस्ती न की जाए तो यह छोटे-छोटे काम बहुत फ़ायदेमंद साबित हो सकते हैं। इस उम्र में नमाज़ वग़ैरा सिखाने के लिए मां-बाप को बच्चे पर दबाव नहीं डालना चाहिए।

एक शख़्स कहता है कि हमारे पड़ोस में एक फ़ैमिली रहती थी जिस से हमारे बहुत अच्छे ताल्लुक़ात थे। वह फ़ैमिली बहुत ही नेक और बाअख़्लाक़ थी लेकिन घर के बुज़ुर्ग को मैंने कभी नमाज़ पढ़ते नहीं देखा था। एक बार मैंने वजह पूछी तो बहुत ज़ोर देने के बाद उन्होंने बताया, ''नमाज़ के साथ मेरी ज़िंदगी की बड़ी कड़वी यादें जुड़ी हैं। जब मैं नमाज़ के बारे में सोचता हूँ तो मुझे झुरझुरी सी आ जाती है। जब मैं छोटा था तो मेरे अब्बा मुझे फ़ज्र की नमाज़ के लिए जगाया करते थे। सर्दियों में उनकी ज़िद थी कि मैं ठंडे पानी ही से वज़ू करूं ताकि बड़े होकर गर्म पानी मेरी कमज़ोरी न बन जाए। यह सब कुछ उस वक़्त तक चलता रहा जब तक मैं बाप के असर में रहा। अब जब से मैं अपने पैरों पर खड़ा हुआ हूँ तब से मैंने नमाज़ ही छोड़ दी है।''

इस क़िस्से को पढ़ कर अंदाज़ा होता है कि बच्चे के लिए जिस काम की यादें ख़ुशगवार होंगी वह उसे हमेशा करने की कोशिश करेगा लेकिन नाख़ुशगवार बल्कि तकलीफ़ देने वाली यादों की सूरत में वह उस काम से नफ़रत भी कर सकता है।

अगर माँ-बाप ख़ुद नमाज़ी हों तो धीरे-धीरे बच्चों को भी उसका आदी बना सकते हैं और फिर वह बालिग़ होने के बाद ख़ुद बख़ुद शौक़ से नमाज़ पढ़ने लगेंगे।

अगर माँ-बाप बच्चे की कम उम्री को वजह समझें और यह सोचने लगें कि बच्चे को नमाज़ के लिए कहने की ज़रूरत नहीं है तो फिर बालिग़ होने के बाद उसके लिए नमाज़ पढ़ना मुश्किल हो जाएगा। क्योंकि बड़े होकर किसी काम को अपनाना मुश्किल होता है। यही वजह है कि

रसूल[स०] और हमारे इमामों[अ०] ने छः या सात साल की उम्र में बच्चे को नमाज़ पढ़ने की आदत डालने का हुक्म दिया है। इमाम बाक़िर[अ०] ने फ़रमाया है, "हम अपने बच्चों को पांच साल की उम्र में नमाज़ पढ़ने पर तैयार करते हैं और सात साल की उम्र में उन्हें नमाज़ पढ़ने का हुक्म देते हैं।"

इमाम सादिक़[अ०] ने फ़रमाया है, "जब बच्चा छः साल का हो जाए तो ज़रूरी है कि वह नमाज़ पढ़े और जब वह रोज़ा रख सकता हो तो ज़रूरी है कि रोज़ा रखे।"

रोज़े के मामले में बच्चे को धीरे-धीरे आदत डालनी चाहिए। सात-आठ साल की उम्र के बच्चे को सहरी के लिए ज़रूर उठाना चाहिए ताकि वह नाश्ते की जगह सहरी खाए और उसका आदी हो जाए। जब बच्चा रोज़ा रख सकता हो तो उसको रोज़े का शौक़ दिलाना चाहिए। अगर वह रोज़ा पूरा न कर सके तो बीच में उसे कुछ खाने-पीने को दिया जा सकता है। इस तरह धीरे-धीरे उसमें बर्दाशत करने की ताक़त पैदा हो जाएगी। रोज़े की फ़ज़ीलत और सवाब बताने से भी बच्चे की बर्दाशत की ताक़त बढ़ती है। रमज़ानुल मुबारक के दिनों में बच्चों की ज़िम्मदारियाँ कम होनी चाहिए ताकि वह आराम से रोज़ा रख सकें। रमज़ानुल मुबारक के बाद उन्हें ईनाम भी दिया जाना चाहिए। दिन में ध्यान रखें कि कहीं बच्चा छुप पर रोज़ा तोड़ न ले।

याद रखिए! बालिग़ होने से पहले बच्चे पर शरई एहकाम वाजिब नहीं होते और उन्हें छोड़ने से उन पर कोई गुनाह नहीं होगा मगर मां-बाप को यह हक़ नहीं पहुँचता कि वह बालिग़ होने से पहले बच्चे को आज़ाद छोड़ दें कि जो चाहे करता फिरे। अगर बच्चा किसी के घर का शीशा तोड़ दे या किसी को कोई जिस्मानी नुक़सान पहुंचा दे तो वाजिब है कि बालिग़ होकर नुक़सान को दूर करे और उसकी शरई दियत अदा करे।

आज़ादी की सूरत में बालिग़ होने के बाद भी वह नहीं बदलेगा और जो आदतें पक्की हो गई हैं उन पर अमल करता रहेगा। इसलिए ज़िम्मेदार माँ-बाप को चाहिए कि वह बचपन ही से अपने बच्चों को वाजिब और हराम के बारे में बताएं और हराम काम अंजाम देने से रोकें और वाजिब काम को करने में उनकी मदद करें।

इस बातचीत का ख़ुलासा

1- बच्चों को दीनी तालीम और उन्हें इबादात की पहचान एहतेराम के साथ करवानी चाहिए ताकि यह बात दिल की गहराई में उतर जाए।

2- बच्चों की ताक़त को ध्यान में रखते हुए उन पर उतना बोझ डाला जाए जितना वह बर्दाशत कर सकें। बेजा सख़्ती और दबाव से उनके ज़ेहन पर बुरा असर पड़ सकता है और वह इन चीज़ों से नफ़रत भी कर सकते हैं

3- बालिग़ होने के बाद वाजिब कामों की अदाएगी तो ज़रूरी है लेकिन मुस्तहब आमाल के लिए बच्चों पर दबाव नहीं डालना चाहिए बल्कि प्यार से उन्हें ज़ेहनी तौर पर तैयार करना चाहिए।

4- इबादात और दूसरे नेक काम करने पर उसकी हौसला अफ़ज़ाई करनी चाहिए ताकि उसका रुजहान और बढ़े और वह कामयाबी के रास्ते पर चल सके। ●

बच्चों की दुनिया

■ बाक़िर रज़ा काज़मी

कितनी ख़ूबसूरत है बच्चों की दुनिया!
बच्चों की दुनिया में सब आपस में दोस्त हैं।
बच्चों की दुनिया में बड़ी जल्दी दोस्ती हो जाती है।
बच्चों की दुनिया में इस्तेमाल होने वाली बंदूक़ें दिखाई नहीं देतीं या अगर दिखाई भी देती हैं तो खिलौने की सूरत में।
बच्चों की दुनिया में झूठ नहीं होता। अगर होता भी है तो जल्दी सामने आ जाता है।
कितनी प्यारी है यह बच्चों की दुनिया!
बच्चों की दुनिया में गाड़ियाँ टकराती हैं लेकिन उसमें कोई ज़ख़्मी नहीं होता।
बच्चों की दुनिया में पुलिस कभी रिश्वत नहीं लेती बल्कि हंसते-खेलते अपना फ़र्ज़ अच्छे से निभाती है।
बच्चों की दुनिया में कोई नशीला नहीं होता।
बच्चों की दुनिया में अगर कोई परेशान करता है तो कहा जाता है परेशान न करो वरना तुम्हारी अम्मी से कह दूँगा।
कितनी हसीन है यह बच्चों की दुनिया!
बच्चों की दुनिया में बग़ैर मेहर और जहेज़ के शादी हो जाती है।
बच्चों की दुनिया में तलाक़ मायने नहीं रखती।
बच्चों की दुनिया में नाराज़गी कुछ देर की होती है।
बच्चों की दुनिया में ख़ाकसारी है जो बूतुराबी होने का पता देती है।
कितनी सादी है यह बच्चों की दुनिया!
बच्चों की दुनिया में दिल नफ़रत, कीना, हसद... से पाक होता है।
बच्चों की दुनिया में दूसरों से ज़्यादा उम्मीद नहीं होती।
बच्चों की दुनिया में घर बनता है लेकिन जल्दी टूट जाता है, क्योंकि बच्चे उस से दिल नहीं लगाते।
बच्चों की दुनिया में देखो कि दग़ाबाज़ी का वुजूद नहीं।
कितनी शीरीं है बच्चों की यह दुनिया!
बच्चों की दुनिया में दूसरों की तल्ख़ बातों को दिल पर नहीं लिया जाता।
बच्चों की दुनिया में दिखावे के लिए काम नहीं किया जाता।
बच्चों की दुनिया में ग़म जल्दी भुला दिये जाते हैं।
कहते हैं बच्चों का दिल ज़ाहिर में तन्हा लेकिन हक़ीक़त में एक समंदर की तरह हुआ करता है।
आईए! कुछ अदब-तहज़ीब अपने बच्चों से भी सीखें।

इमाम अ० मेहदी का इंतेज़ार

■ फ़साहत हुसैन

इंतेज़ार क्या है?

इंतेज़ार यानी मौजूदा सूरते हाल पर राज़ी और ख़ुश न होकर एक बेहतर हालत की आरज़ू करना, जैसे एक माँ जब अपने बेटे का इंतेज़ार करती है तो वह दरहक़ीक़त अपने बेटे की जुदाई पर राज़ी नहीं होती और वह उस से मुलाक़ात की आरज़ू रखती है इसी तरह एक बीमार अपनी बीमारी और दर्द पर ख़ुश नहीं होता और इस हालत से निजात का इंतेज़ार करता है।

इंतेज़ार की दो क़िस्में हैं

एक इंतेज़ार यह है जिसमें इंतेज़ार करने वाले के कंट्रोल में कुछ नहीं होता, जैसे पानी में डूबता हुआ एक इन्सान किसी निजात देने वाले का इंतेज़ार करता है, न वह अपनी निजात के वक़्त को आगे कर सकता है न पीछे, अगर निजात देने वाले वक़्त पर आ गए तो वह बच जाएगा वरना डूब जाएगा।

दूसरा इंतेज़ार वह है जिसका क़रीब या दूर करना ख़ुद इन्सान के कंट्रोल में है जैसे एक बीमार के लिए सेहतमंद होने का इंतेज़ार, एक बेघर के लिए घर वाला होने का इंतेज़ार, एक ग़रीब के लिए मालदार या एक जाहिल के लिए आलिम होने का इंतेज़ार।

इंतेज़ार की इस क़िस्म में इन्सान को पूरी आज़ादी होती है कि अपनी बीमारी का जल्दी इलाज करे या उसमें देर करे, घर जल्दी बनाए या देर करे और इल्म व माल हासिल करने की जल्दी कोशिश करे या उसमें देर करे।

इन दोनों इंतेज़ारों में फ़र्क़

इन दोनों इंतेज़ार में फ़र्क़ यह है कि पहले इंतेज़ार में इन्सान को उम्मीद तो होती है लेकिन उसमें हरकत (मूवमेंट) और कोशिश नहीं होती और यह हालत इंतेज़ार न करने से बेहतर है क्योंकि कम से कम इंतेज़ार करने वाले शख़्स में उम्मीद तो होती है जो ख़ुद एक बड़ी दौलत है क्योंकि उम्मीद के ज़रिए इन्सान को अपने फ़्युचर में रौशनी नज़र आती है, लेकिन इंतेज़ार अगर दूसरी क़िस्म का हो तो उम्मीद के साथ-साथ हरकत (मूवमेंट) और कोशिश भी होती है ताकि नापसंदीदा हालत को जितनी जल्दी हो सके बेहतर हालत में तबदील किया जा सके।

कौन सा इंतेज़ार?

इमामे ज़माना[अ०] का इंतेज़ार करने वाले दोनों तरह के लोग हैं लेकिन ख़ुदाई सिस्टम में तबदीली का क़ानून यह है कि जब तक लोग ख़ुद तबदीली के लिए कोशिश न करें उस वक़्त तक तबदीली नहीं आती। क़ुरआन इस क़ानून को इस तरह बयान करता है, "अल्लाह किसी क़ौम की हालत उस वक़्त तक नहीं बदलता जब तक कि वह ख़ुद न बदले।"

जबकि पहली क़िस्म यानी बग़ैर हरकत और कोशिश के इंतेज़ार न सिर्फ़ यह कि इमाम[अ०] के ज़ुहूर में देरी की वजह बनता है बल्कि क़ौम की काम करने की ताक़त को भी कमज़ोर कर देता है।

इंतेज़ार के बारे में आने वाली हदीसों को देखें तो उन से भी इंतेज़ार की दूसरी क़िस्म समझ में आती है। हदीसों के इंतेज़ार करने वाले को इन सिफ़ात से याद किया गया है:

इमाम सादिक़[अ०] से किसी ने सवाल किया कि उस शख़्स के बारे में आप क्या फ़रमाते हैं जो इमामों की विलायत को मानता हो और ख़ुदा की हुकूमत का इंतेज़ार कर रहा हो और इसी हालत में इस दुनिया से गुज़र जाए।

इमाम[अ०] ने जवाब में फ़रमाया, "वह उस शख़्स की तरह है जो इंक़ेलाब के रहबर यानी इमाम[अ०] के साथ उनके ख़ेमे में मौजूद हो"। फिर इमाम थोड़ी देर ख़ामोश रहे और फ़रमाया, "उस शख़्स की तरह है जो रसूलुल्लाह[स०] के साथ (जंगों में शरीक) रहा हो।

इसी तरह दूसरी हदीसों में आया है:

इंतेज़ार करने वाला उस शख़्स की तरह है जिसने रसूलुल्लाह के सामने जिहाद किया हो,

उस शख़्स की तरह है जिसने अल्लाह की राह में तलवार चलाई हो,

उस शख़्स की तरह है जो इमामे ज़माना[अ०] के परचम तले हो,

उस शख़्स की तरह है जो रसूलुल्लाह की नज़रों के सामने शहीद हुआ हो।

इंतेज़ार करना उम्मत का बेहतरीन अमल है।

इंतेज़ार करना बेहतरीन इबादत है।

इन हदीसों में दो अहम बातें सामने

आती हैं:

एक यह कि इंतेज़ार में जिहाद, अमल और कोशिश ज़रूरी है।

दूसरे यह कि बग़ैर कोशिश और हरकत के सिर्फ़ ज़ेहनी इंतेज़ार करने से कोई इतनी सारी फ़ज़ीलतों का मालिक नहीं हो सकता जो हदीसों में बयान हुई हैं।

कोशिश किस तरह करें?

यह जानने के लिए कि कोशिश किस तरह की जाए यह जानना ज़रूरी है इमाम[अ०] के आने का असली मक़सद क्या है?

इस सवाल के जवाब में हम यह कह सकते हैं कि इमाम के ज़ुहूर का सबसे बड़ा मक़सद यह है कि इस दुनिया से ज़ुल्म व सितम का ख़ातमा हो और अल्लाह की ज़मीन को अद्ल व इंसाफ़ से भर दिया जाए जैसा कि बहुत ज़्यादा हदीसों में यह मक़सद बयान किया गया है।

इन सारी हदीसों से यह नतीजा लेना आसान हो जाता है कि इंतेज़ार करने वालों को भी दो बड़े मक़सदों पर कोशिश करनी है:

एक ख़ुद को, अपने आसपास के लोगों और सोसाइटी को जिस हद तक हो सके अद्ल व इंसाफ़ के लिए तैयार करना, अद्ल व इंसाफ़ की राह में छोटे लेवल से लेकर बड़े और इंटरनेशनल लेवल तक जो भी क़दम उठाए जाएं उनकी हिमायत करना। इंसाफ़ पसंद लोग, आदिलाना सिस्टम और इलाही अद्ल की राह में कोशिश करने वाले लोगों, गिरोहों और हुकूमतों की मदद करना।

दूसरे ज़ुल्म से नफ़रत करते हुए हर छोटे-बड़े महाज़ पर ज़ुल्म को कमज़ोर और ख़त्म करना। दुनिया भर में होने वाले ज़ुल्म या ज़ालिमाना सिस्टम की मज़म्मत और उस से बेज़ारी का इज़हार करना।

आख़िर में ख़ुलासा यह कि इमामे ज़माना[अ०] का इंतेज़ार करने वाले दीनी तालीमात को नज़र में रखते हुए जिस हद तक हो सके एक ऐसी सोसाइटी बनाने की कोशिश करें जो इमामे ज़माना की हुकूमत के लाएक़ हो और अपनी कोशिशों के ज़रिए इमाम[अ०] के ज़ुहूर को नज़दीक करने वाले मूवमेंट में शामिल हों।

एक बूढ़ा और दो बच्चे

■ शहीद मुतह्हरी

एक बूढ़ा आदमी वुज़ू कर रहा था लेकिन वह सही तरीक़े से वुज़ू की तरकीब नहीं जानता था। इमाम हसन[अ०] और इमाम हुसैन[अ०] ने जो उस वक़्त बच्चे ही थे उस बूढ़े आदमी को वुज़ू करते हुए देखा। इसमें कोई शक नहीं की जाहिल को अहकाम व मसाएल बताना और उसकी हिदायत वाजिब है।

इसलिए दोनों सोच रहे थे कि बूढ़े आदमी को सही वुज़ू सिखाना चाहिए। लेकिन अगर उस से सीधे यही कह दिया जाता कि आपका वुज़ू सही नहीं है तो इस से न सिर्फ़ यह कि उसे दिली तकलीफ़ होती बल्कि हमेशा के लिए उसके दिल में वुज़ू के बारे में एक कड़वी बात भी बैठ जाती और क्या पता कि वह डायरेक्टली टोकने को अपनी तौहीन समझ लेता और अकड़ जाता। फिर शायद उसके बाद किसी तरह बात मानने को राज़ी भी न होता।

उन दोनों बच्चों ने सोचा कि डायरेक्टली उस से कुछ न कहा जाए। इसलिए पहले तो आपस में इस तरह बात करने लगे कि बूढ़ा भी सुन रहा था। एक ने कहा, "मेरा वुज़ू तुम्हारे वुज़ू से ज़्यादा सही है।" दूसरे ने कहा, "नहीं! मेरा वुज़ू तुम्हारे वुज़ू से ज़्यादा अच्छा है।"

इसके बाद दोनों इस पर राज़ी हो गए कि बूढ़े आदमी के सामने वुज़ू करें और वह बूढ़ा फ़ैसला करे कि किसका वुज़ू सही है। इसके बाद दोनों ने बूढ़े आदमी के सामने जिस तरह से सही वुज़ू करना चाहिए वैसे ही वुज़ू किया।

अब बूढ़े की समझ में आया कि सही वुज़ू किस तरह होता है। उसने अपनी समझदारी से समझ लिया कि उन दोनों बच्चों का असली मक़सद क्या था।

उनके इस प्यार भरे तरीक़े और ज़िहानत को देखकर उसने कहा, "तुम दोनों का वुज़ू सही है। मैं बूढ़ा आदमी हूं, फिर भी अभी तक मैं सही वुज़ू करना नहीं जानता। बेटा! मैं आप दोनों का बेहद शुक्र गुज़ार हूँ।"

हसद

हुज्जतुल इस्लाम मीसम ज़ैदी

हसद इन्सान के अंदर पैदा होने वाली उस सिफ़त को कहते हैं जिसके बाद इन्सान के अंदर दूसरों में पाए जाने वाले कमाल और अच्छाईयों के ख़त्म होने की तमन्ना रहती है चाहे ख़ुद उसके पास वह अच्छाईयाँ हों या न हों।

इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ०] ने फ़रमाया है, "मैं कभी-कभी अपने कुछ ऐसे बच्चों के साथ भी मोहब्बत का इज़हार करता हूँ जो इस मोहब्बत के हक़दार नहीं हैं ताकि कहीं बच्चों के बीच हसद पैदा न हो जाए और जनाबे यूसुफ़ का क़िस्सा दोबारा न पेश आ जाए।"[1]

कभी-कभी इन्सान हसद के नतीजे में मौत की हद तक पहुँच जाना पसंद कर लेता है। हसद कंजूसी से ज़्यादा बुरी चीज़ है क्योंकि कंजूस अपना माल दूसरे को नहीं देता है लेकिन हसद करने वाला दूसरों की बख़्शिश को भी बर्दाश्त नहीं करता। जो शख़्स किसी दूसरे के लिए थोड़ी सी भी अच्छाई सुनने के लिए भी तैयार न हो यक़ीनन उसके अंदर हसद पाया जाता है। हसद इन्सान को झूठ बोलने और चालबाज़ी करने पर मजबूर करता है। हसद ही के नतीजे में शैतान की आँखों पर पर्दे पड़ गए थे कि उसको आदम के पुतले का मिट्टी से बनना तो याद रहा लेकिन ख़ुदा का हुक्म समझ में नहीं आया।

हसद हर तबक़े के लोगों में उनके स्टेटस के मुताबिक़ हो सकता है। बादशाह हो या आम आदमी, इन्सान जहाँ अपना कंट्रोल खोता है वहीं हसद का शिकार हो जाता है। हिशाम बिन अब्दुल मलिक अपने बाप की ख़िलाफ़त के दौर में हज के लिए मक्का गया और वहाँ पहुँच कर ख़ान-ए-काबा का तवाफ़ किया। फिर उसने चाहा कि हजरे-अस्वद का बोसा ले लेकिन ज़्यादा भीड़ होने की वजह से हजरे-अस्वद तक नहीं पहुँच सका। हुकूमत के लोगों ने उसकी हिफ़ाज़त के लिए एक मिंबर बना दिया ताकि हिशाम मिंबर पर बैठ जाए और दूसरे लोगों को देख सके। शाम के रहने वाले कुछ लोग भी हिशाम के पास मौजूद थे कि अचानक इमाम ज़ैनुलआबेदीन[अ०] मस्जिदुल हराम में दाख़िल हुए। आपके पास से बेहतरीन ख़ुश्बू आ रही थी। आप ने ख़ाना-ए-काबा का तवाफ़ करना शुरु किया। जब आप हजरे-अस्वद के पास पहुँचे लोग ख़ुद-बख़ुद दूर हो गए और आपको जगह दे दी। आपने दोबारा फिर तवाफ़ किया लोगों ने दोबारा आपके लिए रास्ता बना दिया ताकि आप हजरे-अस्वद का बोसा ले सकें। शाम के रहने वालों में से एक शख़्स जो हिशाम के क़रीब मौजूद था ऐसे मंज़र को देखकर बड़े ताज्जुब में पड़ गया और हिशाम से सवाल किया कि आख़िर यह कौन शख़्स है जो लोगों की निगाह में इतना अज़ीम है और सब उसका एहतेराम करते हैं। हिशाम ने कहा कि मैं नहीं पहचानता क्योंकि हिशाम को डर था कि अगर उन्हें पहचनवा दिया तो कहीं ऐसा न हो कि शाम वाले उनके पैरव हो जाएं।

अहलेबैत से मोहब्बत रखने वाले शायर फ़रज़दक़ उसी जगह मौजूद थे। जब उन्होंने देखा कि हिशाम कह रहा है कि मैं नहीं पहचानता, तो फ़रज़दक़ ने कहा कि मैं इन्हें जानता हूँ। शामी ने कहा वह कौन है? फ़रज़दक़ ने इमाम सज्जाद[अ०] की शान में अपने मशहूर अश्आर पढ़े जिसके पहले शेर में फ़रज़दक़ कहते हैं,

"यह वह हैं जिन्हें मक्का पहचानता है। यह वह शख़्स है जिसे काबा पहचानता है, यह वह शख़्स है जिसे हिल व हरम का रहने वाला हर शख़्स पहचानता है।"

लेकिन इमाम सज्जाद[अ०] की इतनी अज़मत होने के बावजूद हिशाम का यह कहना कि मैं नहीं पहचानता सिर्फ़ हसद की निशानी है। क़ुरआन मजीद में हसद की बहुत बुराई की गई है और हसद से बचने की दुआ माँगने का हुक्म दिया गया है।

इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने फ़रमाया, "हसद करने वाला अपनी ज़िंदगी का मज़ा नहीं ले पाता।"

एक दूसरी जगह पर इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने फ़रमाया है, "दीन को तीन चीज़ें बरबाद कर देती हैं: हसद, ख़ुद-पसंदी और ग़ुरूर।"

यह भी आप ही का क़ौल है, "हसद उसी तरह ईमान को खा जाता है जिस तरह आग लकड़ी को।"

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं, "जो इंसान अपने हसद को कंट्रोल नहीं कर पाता उसका बदन उसकी रूह की क़ब्र बन जाता है।"

इमाम जाफ़र सादिक़[अ॰] ने फ़रमाया है, "ख़ुदा के हुक्म का एहतेराम करो और एक-दूसरे से हसद न करो।"

हज़रत ईसा[अ॰] के कामों में से एक काम ज़मीन का चक्कर लगाना भी था। एक बार हज़रत ईसा[अ॰] अपने साथियों में से एक ऐसे साथी के साथ सफ़र पर निकले जिसका क़द छोटा था और वह ज़्यादा तर आपके साथ रहा करता था। हज़रत ईसा[अ॰] जब समन्दर के पास पहुँचे तो पूरे यक़ीन के साथ बिस्मिल्लाह कहा और पानी पर क़दम रख दिया। वह साथी भी आपके साथ हो गया जैसे ही उसने पानी पर क़दम रखा उसमें ग़ुरूर पैदा हो गया और उसने ख़ुद से कहा, "अगर ईसा पानी पर चल लेते हैं तो देखो मैं भी पानी पर चल रहा हूँ। बस अब इनमें और मुझ में क्या फ़र्क़ है? यह सोच पैदा होते ही वह पानी में डूबने लगा और हज़रत ईसा[अ॰] से मदद माँगी। हज़रत ईसा[अ॰] ने उसकी आवाज़ सुनते ही उसे पानी से निकाल दिया और फ़रमाया, "अरे ऐ कम अक़्ल आख़िर तू क्या कह रहा था?" उसने जवाब दिया, "मैं कह रहा था कि यह ईसा हैं जो पानी पर चल रहे हैं और यह मैं हूँ और इस बात से मेरे अंदर ग़ुरूर पैदा हो गया।" हज़रत ईसा[अ॰] ने उस से कहा, "अल्लाह ने तेरे लिए जो जगह क़रार दी तूने उस से हटकर देखना शुरु कर दिया और जो कुछ तूने कहा वह उस से बेज़ार हो गया। ख़ुदा की बारगाह में तौबा कर। उस शख़्स ने तौबा की और अपनी पिछली जगह पहुँच गया।[2]

इस वाक़िए से पता चलता है कि हमें ख़ुदा के हुक्म का हमेशा ध्यान रखना चाहिए और कभी भी एक-दूसरे से हसद नहीं करना चाहिए।

इमाम जाफ़र सादिक़[अ॰] ने फ़रमाया है, "मोमिन एक-दूसरे पर रश्क करता है, हसद नहीं करता और मुनाफ़िक़ हसद करता है लेकिन कभी रश्क नहीं करता।"

रश्क यानी दूसरे को अच्छी जगह पर देखकर ख़ुद भी उस जगह तक पहुँचने की आरज़ू करना लेकिन हसद यानी दूसरे की अच्छी हालत देखकर बर्दाश्त न कर पाना।

1- बिहारुल अनवार, 74/78, 2- काफ़ी, 3/645

टीचर्स का ग़लत रोल

मो. माहिर रिज़वी

एक ज़माना जब टीचर्स तालीम के साथ-साथ गार्जियन-शिप भी करते थे। अपने स्टूडेंट्स पर कड़ी नज़र रखते थे कि बच्चे किसी ग़लत आदत में न पड़ जाएं और साथ-साथ अच्छे अख़लाक़ और तहज़ीब की बातें भी सिखाते थे। जब ज़माना बदला तो लोगों में भी बदलाव आया। नये ज़माने की हवा बदलने से ज़्यादातर टीचर्स में ख़ुदग़र्ज़ी आ गई। ख़ुदग़र्ज़ी आने से बच्चों की गार्जियन-शिप चली गई। जब गार्जियन-शिप गयी तो टीचर, टीचर न होकर एक एजुकेशन वर्कर यानी पढ़ाने वाला बनकर रह गया। ऐसा होने से बच्चों के दिलों से उनका अदब और रेस्पेक्ट उठ गया। और बच्चे स्टूडेंट न होकर पढ़ने वाले बन गए। इस तरह टीचर्स और स्टूडेंट्स के बीच जो गैप होना चाहिए वह धीरे-धीरे अब ख़त्म सा हो गया है। अब तो स्टूडेंट टीचर्स के बराबर में बैठता है। उन से ऊँची आवाज़ में बात करता है। उनसे मुँहज़ोरी तक करता है। अगर टीचर्स कोई नसीहत करता है तो उसे इगनोर करता हुआ अपने रास्ते निकल जाता है।

इस तरह ख़ुदग़र्ज़ी और बेअदबी का यह कीड़ा समाज में फैलता जा रहा है। जिसे ख़त्म करना आज के दौर में बड़ा मुश्किल काम है।

एक टीचर का रुतबा पैरेंट्स की तरह से होता है। उनके हक़ अदा किये बिना नॉलेज को हासिल नहीं किया जा सकता है। यह कुदरत का क़ानून है। यही वजह है कि वह डिग्रियाँ तो हासिल कर लेते हैं, मगर उनमें क़ाबलियत पैदा नहीं होती। नतीजा यह है कि वह कामप्टीशन के इस दौर में पीछे रह जाते हैं। इसका अंजाम बेरोज़गारी की शक्ल में हमारे सामने है। जिससे उनमें झुंझलाहट और फ़्रस्ट्रेशन पैदा हो रहा है और वह बरबादी के रास्तों पर जा रहे हैं।

जब तक टीचर्स ख़ुदग़र्ज़ी छोड़कर अपनी ज़िम्मेदारियाँ पूरी नहीं करते हैं, जो अल्लाह ने उन पर डाली हैं तब तक बच्चों का फ़्युचर ऐसे ही तबाह होता रहेगा।

वह टीचर्स जिन्होंने ख़ुदग़र्ज़ी को ही अपना ईमान बना लिया है, वह लोग ज़रा अपने-अपने दिलों पर हाथ रखकर सोचें कि क्या वह अपने स्टूडेंट्स का हक़ अदा कर रहे हैं? क्या किताब से रिश्ता सिर्फ़ रोज़ी के लिए होता है?

ख़ुदा ने हमको जो ज़िम्मेदारियाँ दी हैं उन्हें हमको सच्चाई, ईमानदारी और लगन के साथ ख़ुशी-ख़ुशी अदा करना चाहिए। कोई भी ऑर्गेनाइज़ेशन हमारे साथ कितना भी बुरा सुलूक करे, हमें उसकी परवा किए बिना अपनी ज़िम्मेदारियों को अदा करते रहना चाहिए। हमें दूसरों को नहीं देखना है कि वह ग़लत कर रहे हैं तो हम भी वैसा ही काम करें। बल्कि हमको ख़ुद सोचना चाहिए कि क्या काम अल्लाह की नज़र में ग़लत है और क्या सही है।

یا علی ابن موسی الرضا علیک السلام

इमाम अ० अली रज़ा का अख़लाक़

■ मौलाना अख़्तर अब्बास जौन

अच्छे अख़लाक़ के बिना इन्सान की ज़िंदगी एक ऐसे पेड़ की तरह है जिसमें न साया हो न फल और अगर इन्सान बदअख़लाक़ हो तो उसकी मिसाल कांटेदार पेड़ से भी दी जा सकती है।

नबियों अ० और इमामों अ० ने अपने अज़ीम अख़लाक़ के ज़रिए ज़िंदगी का ऐसा नमूना पेश किया है जिसके साए में आज बदअख़लाक़ी की आग में झुलसती हुई इंसानियत सुकून की सांस ले सकती है।

अख़लाक़ पर काफ़ी कुछ बात की जा सकती है। मगर इस आर्टिकल में सिर्फ़ इमाम रज़ा अ० की अख़लाक़ी ज़िंदगी के कुछ नमूने पेश किए जा रहे हैं।

इब्राहीम बिन अब्बास कहते हैं, "मैंने कभी नहीं देखा कि इमाम रज़ा अ० ने अपनी बातचीत के ज़रिए किसी पर जुल्म किया हो। कभी किसी की बात नहीं काटते थे। कभी किसी की हाजत पूरी करने से मुँह नहीं मोड़ते थे। किसी के साथ बैठते थे तो कभी उसकी तरफ़ पैर नहीं फैलाते थे और टेक नहीं लगाते थे।

कभी गुलामों और नौकरों की तौहीन नहीं करते थे। उन्हें हमेशा अपने साथ दस्तरख़ान पर बिठाते थे। कभी बुलंद आवाज़ में क़हक़हा नहीं लगाते थे। आपका हंसना हमेशा मुस्कुराहट की शक्ल में होता था। रात में कम सोते थे, रोज़ा ज़्यादा रखते थे। हर महीने के शुरु के, बीच के और आख़िरी दिनों में रोज़ा रखते थे और कहते थे कि यह पूरे महीने का रोज़ा है। छुपकर ख़ास कर रातों में ज़्यादा सदक़ा देते और ख़ैरात करते थे।

ह्युमन राइट्स का ख़याल

इमाम रज़ा अ० इन्सानी इज़्ज़त व एहतेराम का बहुत ख़याल रखते थे और इन्सानों की तौहीन, तहक़ीर, उनको पस्त समझने और उनका मज़ाक उड़ाने से लोगों को रोकते थे। शक्लो सूरत या रंग या माल इमाम की निगाह में बुलंदी का मेयार नहीं थे। इमाम अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में ह्युमन राइट्स का बहुत ख़याल रखते थे।

इमाम अ० का ख़ादिम यासिर कहता है, "इमाम अ० कहते थे कि अगर मैं तुम्हारे पास आऊँ और तुम खाना खा रहे हो तो अपनी जगह से उठना नहीं, पहले खाना ख़त्म कर लो फिर मेरे पास आना। कभी इमाम अ० किसी ख़ादिम को पुकारते थे और इमाम को बताया जाता था कि वह अभी खाना खा रहा है तो इमाम अ० कह देते थे, "रहने दो उसे खाना खाने दो।"

पर्दे के पीछे से

बहुत सारे लोग इमाम के पास इकट्ठा थे और हलाल-हराम व दीनी अहकाम के बारे में सवाल कर रहे थे। एक गेहुएं रंग का लम्बा आदमी भी आया जो ख़ुरासान का रहने वाला था। उसने सलाम करने के बाद ख़ुद को इमाम के चाहने वाले की हैसियत से पहचनवाया और कहा, "हज से वापसी में मेरा सारा माल गुम हो गया है।" और इमाम अ० से मदद चाही ताकि अपने शहर वापस जा सके और यह भी कहा कि अपने शहर वापस पहुँच कर उतनी रक़म इमाम की तरफ़ से सदक़ा दे दूँगा।

इमाम अ० ने उस से बैठने के लिए कहा। जब लोग वापस चले गए तो इमाम घर के अंदर गए और दरवाज़े के पीछे से अपने हाथ को बाहर निकाला और आवाज़ दी, "ऐ ख़ुरासान के रहने वाले! कहाँ हो?" इसके बाद फ़रमाया, "यह दो सौ दीनार हैं इसे लेकर ख़र्च करो और ख़ुदा से बरकत की दुआ करो। मेरी तरफ़ से सदक़ा देने की भी ज़रूरत नहीं है और अब वापस जाओ ताकि हम एक-दूसरे को न देखें। इस शख़्स ने दीनार लिए और चला गया।

एक सहाबी जिनका नाम सुलेमान था अभी वहाँ पर मौजूद थे।

उन्होंने इमाम[अ०] से सवाल किया, "आप ने उसे बहुत ज़्यादा बख़्शिश कर दी है और फिर आप ने अपनी सूरत को उस से क्यों छुपाया?"

इमाम[अ०] ने फ़रमाया, "इस डर से कि उसकी हाजत को पूरा करते वक़्त उसके चेहरे पर आने वाले शर्मिंदगी के एहसास को न देख लूँ। क्या तुम ने रसूलुल्लाह[स०] की हदीस नहीं सुनी है कि जो नेकी को छुपाकर अंजाम दे उसका अमल सत्तर हज के बराबर है और जो बुराई को ज़ाहिर करे वह ज़लील होता है और जो बुराई को छुपाए उसको माफ़ कर दिया गया है।"

तुम मेरे भाई हो लेकिन कब तक?

इमाम अगर अपने रिश्तेदारों या भाईयों में किसी तरह के सियासी, अख़लाक़ी या एतेक़ादी मामलों में कोई गुमराही देखते थे तो उन्हें फ़ौरन टोक देते थे और इस मामले में रिश्तेदारी का भी ख़याल नहीं करते थे।

एक बार इमाम[अ०] के भाई ज़ैद बिन मूसा काज़िम ने मदीने में ख़ुरूज किया और बनी अब्बासियों को क़त्ल करके उनके घर में आग लगा दी। यह सब इस्लामी क़्याम के उसूलों के ख़िलाफ़ था। इमाम ने फ़रमाया, "ऐ ज़ैद! तुम यह सोचते हो कि गुनाह करके भी जन्नत में चले जाओगे जबकि हमारे वालिद इमाम मूसा[अ०] अल्लाह की इताअत करके जन्नत में गए हैं, इसका मतलब तुम अल्लाह के नज़दीक इमाम मूसा काज़िम[अ०] से भी ज़्यादा महबूब हो। ख़ुदा की क़सम! अगर किसी को किसी चीज़ की जज़ा मिलेगी तो सिर्फ़ अल्लाह की इताअत के ज़रिए। और अगर तुम यह सोचते हो कि गुनाह के बाद भी उसकी तरफ़ से जज़ा मिलेगी तो यह तुम्हारा ग़लत ख़याल है।"

ज़ैद ने कहा, "मैं आपका भाई और इमाम मूसा काज़िम[अ०] का बेटा हूँ।"

इमाम रज़ा[अ०] ने फ़रमाया, "तुम उस वक़्त तक मेरे भाई हो जब तक ख़ुदा की इताअत करो। अल्लाह ने नूह[अ०] से उनके बेटे के बारे में फ़रमाया था, 'वह तुम्हारे ख़ानदान से नहीं है क्योंकि उसका अमल नेक नहीं है।' ख़ुदा ने उसको बुरे अमल की वजह से नूह[अ०] के ख़ानदान से बाहर निकाल दिया था।"

एक दूसरी रिवायत में है कि इमाम ने ज़ैद से फ़रमाया, "ऐ ज़ैद! ख़ुदा से डरो, हम जिस मुक़ाम तक पहुँचे हैं वहाँ तक तक़्वे की वजह से पहुँचे हैं। जो शख़्स मुत्तक़ी नहीं है वह हम में से नहीं है।"

ईमान या दौलत?

इमाम के एक चाहने वाले का कहना है कि मैं मैदाने मिना में इमाम रज़ा[अ०] की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि मेरा एक ख़ुशहाल घराना था और ख़ुदा की बहुत सारी नेमतें हमारे पास मौजूद थीं। फिर ख़ुदा ने हम से सब कुछ वापस ले लिया यहाँ तक कि अब हम उन लोगों के मोहताज हो गए हैं जो कभी हमारे मोहताज थे।

इमाम[अ०] ने फ़रमाया, "ऐ अहमद बिन उमर अल-जली! तुम्हारी हालत कितनी बेहतर है?"

मैंने अर्ज़ किया, "आप पर क़ुर्बान जाऊँ, हमारी हालत यही है जो मैंने आपके सामने बयान की है।" इमाम ने फ़रमाया, "क्या तुम्हें पसंद है कि तुम्हारी हालत ज़ालिम व जाबिर लोगों जैसी हो और तुम्हारे पास दुनिया की बहुत सी दौलत हो?"

मैंने कहा, "नहीं।" इमाम मुसकुराए और फ़रमाया, "तुम्हारे पास ऐसा हुनर और ख़ज़ाना है जिसे तुम सोने से भरी हुई दुनिया के बदले में नहीं बेचोगे। यानी ईमान की दौलते और अहलेबैत की मुहब्बत।"

ग़रीब लोगों का हक़

इमाम रज़ा[अ०] खाना शुरु करने से पहले ग़रीबों और फ़क़ीरों का हिस्सा अलग कर लेते थे। मुअम्मर बिन ख़ल्लाद कहते हैं कि इमाम जब खाना खाना चाहते थे तो एक बड़ी सी सीनी मंगाते थे और दस्तरख़ान पर जो ग़िज़ाएं होती थीं उनमें से अच्छी ग़िज़ाओं को अलग करके फ़क़ीरों के पास भेज देते थे और उनके बीच तक़सीम करा देते थे।

ख़ुरासान में जब इमाम रज़ा[अ०] मामून रशीद के वली-अहद थे उस वक़्त आप ने अपने सारे माल को ग़रीबों में तक़सीम करा दिया था। मामून के वज़ीर फ़ज़्ल बिन सहल ने कहा कि इस से नुक़सान हो जाएगा। इमाम ने फ़रमाया, "नुक़सान नहीं बल्कि फ़ायदा होगा" और फिर फ़रमाया, "हर वह अमल जिसके ज़रिए अल्लाह की तरफ़ से अज्र व करामत तलब करो उसमें नुक़सान नहीं है।"

ग़ुरूर से बचो

अहमद बिन मुहम्मद बिन अबी नस्र बज़िंती कहते हैं कि मैं इमाम के तीन साथियों के साथ इमाम की ख़िदमत में मौजूद था। थोड़ी देर बाद हम ने इमाम से जाने की इजाज़त चाही। इमाम ने फ़रमाया, "अहमद तुम बैठो।" मेरे साथी चले गए और मैं इमाम के पास रह गया। मेरे अंदर यह एहसास पैदा हुआ कि तमाम लोगों के बीच इमाम ने मुझे ही अपने पास रोका है और यह मेरे अंदर ग़ुरूर और फ़ख़्र की निशानी थी।

इमाम[अ०] मेरे पास आए और फ़रमाया, "ऐ अहमद! एक बार हज़रत अली[अ०] सअ्सआ बिन सौहान की अयादत के लिए गए और जब वापस पलटने लगे तो फ़रमाया, "ऐ सअ्सआ! यह जो हम तुम्हारी अयादत के लिए आए हैं इसकी वजह से अपने साथियों पर फ़ख़्र न करना। मेरी अयादत की वजह से ख़ुद को दूसरों से बेहतर न समझना। तुम ख़ुदा के सामने सर झुकाओ ख़ुदा तुम्हें इज़्ज़त व सरबुलंदी अता करेगा।"

حجاب

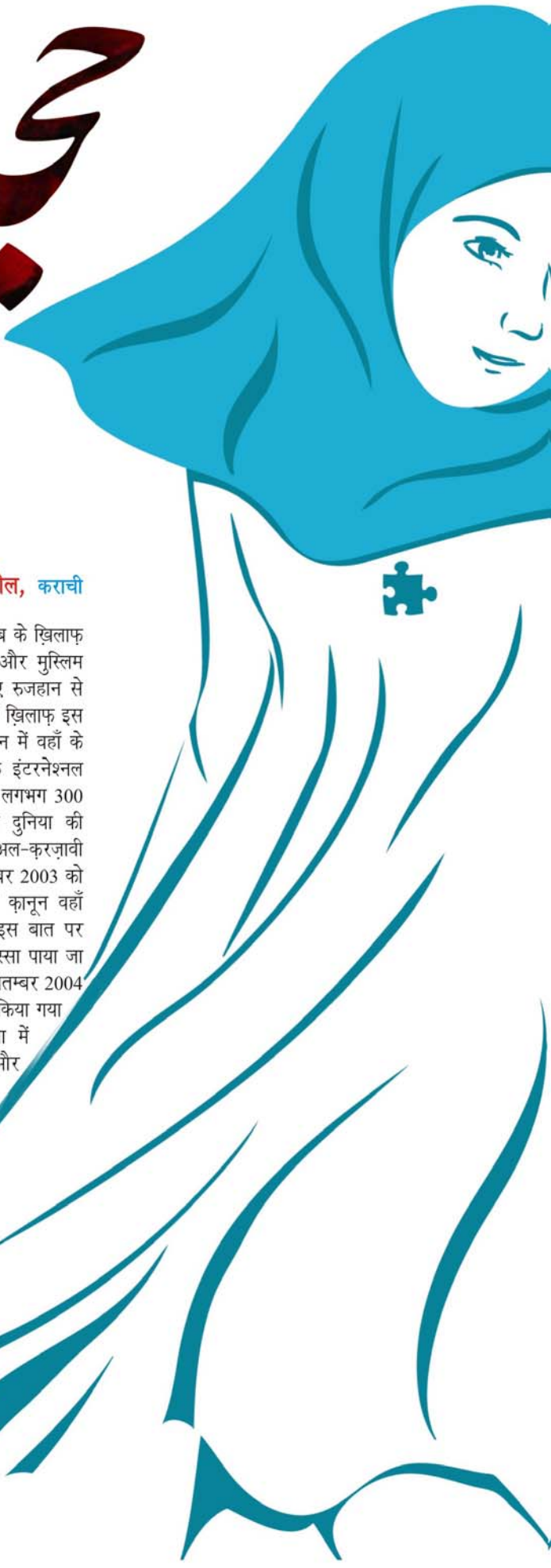

हिजाब डे

समीहा राहील, कराची

ग़म में डूबे हुए इस आलम में भी उसे अपने पर्दे का इतना ध्यान रखने पर सभी ताज्जुब कर रहे थे कि जान से प्यारा बेटा मौत के बिस्तर पर है और उसे अपने हिजाब की पड़ी हुई है। किसी ने इस पर ताज्जुब किया तो उसने नमनाक आंखों और भीगे लहजे में जवाब दिया कि मैंने अपना बेटा खोया है, अपनी हया तो नहीं खोई। (यह वाक़ेआ उस वक़्त का है जब कई बरस पहले पाकिस्तान में सैलाब आया था।) हमारी उम्मत की कुछ बेटियाँ पानी के सैलाब में अपने हिजाब और ज़िंदगी की बक़ा की जंग लड़ रही हैं और इस्लाम की कुछ बेटियाँ वेस्टर्न कल्चर के सैलाब में हिजाब का तहफ़्फ़ुज़ कर रही हैं।

आज के दौर में दुनिया की शैतानी ताक़तों ने मुसलमानों पर कल्चर अटैक करते हुए दीन की बुनियादी निशानियों को निशाना बनाया हुआ है। क़ुरआने करीम, रसूल[स०] और आले रसूल[अ०] और हिजाब उनके ख़ास निशाने हैं। हर जगह पर इन इस्लामी निशानियों को कट्टरपंथी सोच और दहशतगर्दी के साथ जोड़ा जा रहा है। फ़्रांस, बेलजियम, डेनमार्क और यूरोप के अलग-अलग मुल्कों में इसके ख़िलाफ़ क़ानून बनाए जा रहे हैं और सारे मुसलमान ख़ास कर इन मुल्कों में रहने वाले मुसलमान इन नाइंसाफ़ी भरे क़ानूनों की वजह से मुश्किलों से दो चार हैं।

इंटरनेशनल हिजाब-डे 4 सितम्बर को क्यों मनाया जाता है?

यह सवाल आम तौर पर ज़ेहनों में उठता है? इसका बैक-ग्राउंड कुछ यूँ है कि 11 सितम्बर के बाद की दुनिया में वेस्टर्न मीडिया ने जहाँ इस्लाम के ख़िलाफ़ खुल कर ज़हर उगला, वहीं इस्लामी निशानियों और ख़ास तौर पर हिजाब के ख़िलाफ़ उनका तअस्सुब बढ़ता चला गया और मुस्लिम समाज में हिजाब के और बढ़ते हुए रुजहान से मीडिया काफ़ी सहम गया। हिजाब के ख़िलाफ़ इस बढ़ती हुई मुहिम को देखते हुए लंदन में वहाँ के मेयर लॉक स्टोन ने लंदन में एक इंटरनेशनल कांफ्रेंस बुलाई जिसमें दुनिया भर के लगभग 300 मेहमानों ने शिरकत की। इस्लामी दुनिया की मशहूर शख़्सियत अल्लामा यूसुफ़ अल-क़रज़ावी भी उसके मेहमान थे। चूंकि 2 सितम्बर 2003 को फ़्रांस में हेड स्कार्फ़ पर पाबंदी का क़ानून वहाँ पार्लियामेंट में पेश हुआ था और इस बात पर मुसलमानों के अंदर बहुत ग़म व गुस्सा पाया जा रहा था इसलिए उसके जवाब में 4 सितम्बर 2004 से इंटरनेशनल हिजाब-डे का ऐलान किया गया और उस दिन से उसे पूरी दुनिया में हिजाब के बचाव के एक नए इरादे और मिशन के तौर पर मनाया जाता है।

समाज में हया के चलन को आम करने, घर और फ़ैमिली के सिस्टम को पाकीज़ा और मज़बूत करने और अख़्लाक़ व किरदार को संवारने के लिए

HIJAB my beauty

अल्लाह ने अपनी आख़िरी आसमानी किताब क़ुरआने करीम में साफ़ तौर पर इंसानों को हिदायत दी और इसमें पहले मर्दों को और बाद में औरतों को हिदायत दी, "ऐ रसूल[ﷺ]! मोमिनों से कह दीजिए कि अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करें कि यही ज़्यादा पाकीज़ा बात है। और बेशक अल्लाह उनके कारोबार से ख़ूब बाख़बर है। और मोमिना औरतों से भी कह दीजिए कि वह भी अपनी नज़रें नीची रखें और अपनी इफ़्फ़त व पाकीज़गी की हिफ़ाज़त करें और अपना बनाओ सिंघार न दिखाएं सिवाए उसके जो ख़ुद बख़ुद ज़ाहिर हो जाए और अपने रूपट्टे को अपने गरेबान पर रखें।" (सूरए नूर/31)

हमारे समाज में यह सोच आम है कि हिजाब का हुक्म सिर्फ़ औरतों के लिए है मगर अल्लाह रब्बुल आलमीन ने मर्दों को भी इसका पाबंद बनाया है कि वह समाज में अख़्लाक़ी सिस्टम को मज़बूत करने में अपना रोल अदा करें। हिजाब महेज़ डेढ़ गज़ कपड़े के टुकड़े को सर पर लपेट लेने का नाम नहीं है बल्कि यह एक पूरा अख़्लाक़ी सिस्टम है जो हमारी पूरी ज़िंदगी को घेरे हुए है। पाकदामनी और शराफ़त को बाक़ी रखने के लिए यह इस्लाम का वह सिस्टम है जो समाज को पाकीज़गी अता करता है, औरत को वक़ार और इज़्ज़त बख़्शता है, फ़ैमलीज़ को मज़बूत करके एक सॉलिड समाज की बुनियाद डालता है।

बेपर्दगी शैतान की सबसे पहली चाल थी और आज भी यही उसकी सबसे पसंदीदा चाल है कि आदम की औलाद को इसी तरह से गुमराह करके उस से उसका लिबास छीन लो। जबकि इसके उलट अल्लाह ने इंसान को सबसे अच्छी मख़लूक़ बनाकर उसे लिबास की तहज़ीब से आरास्ता करके उसे दूसरे हैवानों से ख़ास बनाया था।

हमारे यहां जितनी क़ीमती चीज़ होती है उतना ही लोगों की नज़रों से दूर और अलग-अलग हिफ़ाज़ती तदबीरों के ज़रिए संभाल कर रखी जाती है। इंसानी हया और पाकीज़गी भी अल्लाह की नज़र में एक बहुत ही क़ीमती और महफ़ूज़ रखने के लायक़ चीज़ है और औरत का हुस्न, ख़ूबसूरती और उसका वजूद अल्लाह ने और भी ज़्यादा मोहतरम और क़ीमती बनाया है और उसे उतना ही लोगों की नज़रों से बचाए रखने के लिए हिजाब के एहकाम नाज़िल किए हैं क्योंकि मोती सदफ़ में बंद होकर ही मोती बन पाता है।

अफ़ग़ानिस्तान में मुसलमान होने वाली ब्रिट्रिश जरनलिस्ट ऐवना रेडले (जो हमारे साथ इंटरनेशनल मुस्लिम एंड यमन यूनियन कांफ्रेंस में लेबनान में शरीक थीं और अब IMWU की यूरोप की निगराँ हैं) से मैंने फ़्रांस में हिजाब पर पाबंदी के क़ानून के बारे में पूछा कि आपकी नज़र में यह पाबंदी क्यों लगाई गई है? उन्होंने एक तंज़िया मुस्कुराहट के साथ मुझे जवाब दिया कि देखो राहील! सरकोज़ी की बीवी कारला एक ऐसी मॉडल है जिसकी न्यूड पिक्चर्स इंटरनेट पर आम हैं। इस तरह के लोगों को हमारा हिजाब ज़हर लगता है कि यह क्यों इतनी महफ़ूज़ हैं?

उसने मुझे एक वाक़ेआ भी बताया कि इंग्लैंड में जब उस वक़्त के फ़ारेन मिनिस्टर जैक सटरा ने यह बयान दिया कि मैं नक़ाब वाली औरत के साथ बात नहीं कर पाता क्योंकि मुझे उसका चेहरा नज़र न आने की वजह से बात समझने में मुश्किल होती है, तो मैंने उन्हें जवाब दिया कि आपकी तरह के लोगों को फिर मोबाइल, रेडियो और कम्प्यूटर तो बिल्कुल इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि चेहरा तो नज़र नहीं आता, आप को बात फिर कैसे समझ में आएगी और वह लाजवाब हो गए।

अल्लामा इक़बाल हिजाब की मसलहतों के बारे में अपनी किताब "जावेद नामा" में फ़रमाते हैं: "ऐ वह कि

حجاب حجاب

मार्डन ज़माने ने तेरे दीनी जज़्बे की गर्मी को ठंडा कर दिया है। आओ मैं तुम्हें हिजाब की मसलहतों को खोल कर बताता हूँ। क्रिएटिविटी की आग इंसानी जिस्म में सुलग रही है। इसी क्रिएटिविटी की आग से इंसानी समाज आगे बढ़ रहा है। जिसको भी इस आग का कुछ हिस्सा मिला है, वह अपने अंदर के सोज़ व साज़ की गर्मी से एक कशमकश में फंसा हुआ हो जाता है। हर वक़्त वह अपने ख़ुदा के ज़रिए बनाए गए अपने नक़्श की निगरानी करता है ताकि कोई और उसके नक़्श पर असर न डाल सके। मुस्तफ़ा[स॰] ने ग़ारे हिरा में ख़लवत को चुना और मुसलमान उम्मत का नक़्श उनके दिल में उतार दिया गया। उनकी ख़लवत से एक क़ौम पैदा कर दी गई। दूसरों के साथ कम मिलने-जुलने से सोच और ख़यालों के अंदर ज़िंदगी की लहरें दौड़ने लगती हैं और इंसान ज़्यादा बेदार, ज़्यादा जुस्तजू करने वाला और ज़्यादा हासिल करने वाला बन जाता है। दुनिया के सारे हंगामें पर नज़र डालो और तख़लीक़ करने वाली हस्ती को जलवत के हंगामों की ज़हमत में न डालो क्योंकि हर तख़लीक़ की हिफ़ाज़त के लिए ख़लवत की ज़रूरत होती है और उसके सदफ़ का मोती ख़लवत में ही जन्म लेता है।"

अल्लामा इक़बाल इस नज़्म में बहुत ही बारीक बात बयान करते हैं कि औरत के अंदर चूंकि ख़ुदा की ख़ल्क़ करने की सिफ़त पाई जाती है। अल्लाह ने अपनी इस सिफ़त को सिर्फ़ औरत को ही अता किया है। तो जिस तरह वह ख़ुद ख़ालिक़ है और हमें नज़र नहीं आता और हर वक़्त अपनी तख़लीक़ की निगरानी कर रहा है इसी तरह उसने औरत को भी हिजाब में रहने को पसंद किया है ताकि वह अपनी आने वाली नस्ल की अच्छी परवरिश और निगरानी कर सके। उसे यानी औरत को बाहर के हंगामों की तकलीफ़ मत दो। उसे रोज़ी-रोटी और मज़दूरी के कामों में मत घसीटो कि इस तरह वह दोहरे बोझ का शिकार होकर अपनी असली ज़िम्मेदारी को भूल जाएगी और अपनी नस्ल की परवरिश नहीं कर सकेगी।

सैलाब की तबाहियों पर नज़र डालें और अल्लामा इक़बाल की इस नज़्म पर ग़ौर करें तो पाकिस्तानी औरत हमें नेचर के फैलाए इस हंगामें में भी अपनी ज़िम्मेदारियाँ अच्छी तरह से पूरी करती हुई नज़र आती है। ख़ैबर पुख़्तोन ख़्वाह के कैम्प हों या पंजाब के, सिंध हो या बलूचिस्तान या कश्मीर, औरत हर जगह अपनी हया और पाकीज़गी को बचाने के लिए जंग भी लड़ रही है और अपनी और अपने बच्चों की ज़िंदगी के लिए भी हर मुश्किल का सामना कर रही है। नौशहरा हाइवे पर एक औरत को देखा कि वह अपने बच्चों के लिए सख़्त परेशान थी कि "मुझे सड़क से कहीं दूर ख़ेमा दे दो। मैं भूखी रह लूंगी मगर मेरे बच्चे कहीं सड़क पर किसी गाड़ी की ज़द में न आ जाएं।"

यह है एक इस्लामी औरत की अस्ली तस्वीर जो अपनी हया, पाकदामनी, पाकीज़गी और हिजाब का पूरा पूरा ध्यान रखते हुए अपनी ज़िंदगी और अपनी औलाद का भी ख़याल रखती है। ●

2 फ़रिश्ते

■ इम्तियाज़ अब्बास रिज़वान

एक दिन दो मुसाफ़िर फ़रिश्ते इन्सान की शक्ल में एक अमीर घराने में मेहमान बनकर आए। उस अमीर घराने ने उन लोगों का हुलिया देखकर उनकी मेहमान नवाज़ी की बात तो छोड़िए, उन्हें अपने मेहमान ख़ाने में भी नहीं जाने दिया और रात में सोने के लिए तहख़ाने में जगह दी।

बूढ़े फ़रिश्ते ने तहख़ाने की दीवार में एक दरार देखी और उसने उस दरार को बंद कर दिया। जब जवान फ़रिश्ते ने देखा तो बूढ़े फ़रिश्ते से पूछा, "यह काम आपने क्यों किया ?"

बूढ़े फ़रिश्ते ने जवाब दिया, "जैसा तुम सोचते हो सारे काम वैसे नहीं हैं।"

दूसरे दिन यह दोनों फ़रिश्ते एक दूसरे घर पर गए जो घराना माली लिहाज़ से काफ़ी कमज़ोर था लेकिन मेहमान नवाज़ घराना था। ग़रीब घराने ने रात में खाना खिलाने के बाद अपने बिस्तर उन दोनों मेहमानों को दे दिए। सुबह हुई तो देखा यह दोनों ग़रीब मियाँ-बीवी रो रहे हैं। फ़रिश्तों ने पूछा, "क्या बात है क्यों रो रहे हो ?" उन्होंने जवाब दिया "हमारे पास एक गाय थी जिससे हमारी ज़िंदगी का ख़र्चा चलता था, वह मर गई।" जवान फ़रिश्ते को ग़ुस्सा आया और बूढ़े फ़रिश्ते से कहा, "आप ने क्यों ऐसा होने दिया ? जो घराना अमीर था उसकी दीवार की दरार को तो आप ने बंद कर दिया लेकिन यह घराना जो फ़क़ीर है जिसकी सारी ज़िंदगी का दारोमदार इसी गाए पर था उसे आप ने मरने दिया ?"

बूढ़े फ़रिश्ते ने जवाब में कहा, "जैसा तुम सोचते हो वसा नहीं है। उस अमीर घराने के तहख़ाने में जो दीवार में दरार थी उसमें सोने की एक थैली थी। वह लोग बहुत ही कंजूस और लालची थे मैंने उस दरार को बंद कर दिया ताकि वह थैली उनकी निगाहों से बची रहे। रात में जब हम लोग उसके बिस्तर पर सो रहे थे तो मलकुल मौत उस ग़रीब औरत की रूह को क़ब्ज़ करने आए थे। मैंने उसकी जान के बदले उस गाय को क़ुर्बान कर दिया। सारे काम जैसा कि तुम सोचते हो वैसे नहीं होते बल्कि हम कुछ कामों को बहुत देर में समझते हैं।" ●

5 स्टार डिश

recipe

ब्रेड उपमा

किनारा कटा हुआ ब्रेड – 4 स्लाइस
उबला और कटा हुआ आलू – 4
कटी हुई प्याज़ – 2
बारीक कटी हरी मिर्च – 2
ज़ीरा और सरसों – एक चम्मच
काजू (टुकड़ों में) – दो चम्मच
हल्दी-लाल मिर्च पाउडर – आधा चम्मच
तेल – 100 मिली
नींबू का रस – एक चम्मच
बारीक कटी धनिया पत्ती – दो चम्मच
बारीक लंबी कटी अदरक – दो चम्मच

कुकरी टिप्स

1-बचे हुए अचार के तेल या मसाले को आप कई तरह से इस्तेमाल कर सकती हैं। अरहर दाल का तड़का लगाते वक़्त एक चम्मच अचार का तेल डाल दें। दाल का ज़ाएक़ा बदल जाएगा।

2-अचार के मसाले में उबला आलू मिला कर पराठा बनाएं। कुरकुरा बनेगा। रायते में भी आप आधा चम्मच अचार का मसाला मिला सकती हैं।

3-अगर आप किसी सब्ज़ी का ज़ाएक़ा बदलना चाहती हैं, तो दो तरह के तेल जैसे सरसों और सोयाबीन को एक साथ मिलाकर उसमें सब्ज़ी बनाएं। सब्ज़ी का ज़ाएक़ा अलग लगेगा।

4-प्याज़ काटने से पहले अगर दस मिनट के लिए फ़्रिज में रख दें, तो काटते समय आंसू नहीं निकलेंगे।

तरकीब

ब्रेड को क्यूब के शेप में काटें। कड़ाही में तेल गर्म करें और उसमें सरसों और ज़ीरा डालें। जब ज़ीरा और सरसों पक जाए तो उसमें प्याज़ डालें और हल्का गुलाबी होने तक भूनें। उबले और कटे हुए आलू डालें और उसे कुछ देर तक भूनें। हल्दी पाउडर, लाल मिर्च पाउडर डालें और अच्छी तरह से मिलाएं। अब ब्रेड के टुकड़ों को डालें और इस तरह से मिलाएं कि ब्रेड टूटे नहीं। दो मिनट तक पकाएं। अगर ज़रूरत महसूस हो तो ज़रा सा पानी भी डालें। नींबू का रस, हरी मिर्च और धनिया पत्ती डालकर मिलाएं और गरमागरम सर्व करें।

पनीर कॉर्न टिक्की

कॉर्न (पका हुआ) – एक कप
पनीर (टुकड़ों में कटा) – एक कप
आलू (उबले हुए) – दो
प्याज़ (बारीक कटी) – दो
हरी मिर्च (बारीक कटी) – दो
भुने हुए ज़ीरे का पाउडर – एक चम्मच
धनिया (भुना और दरदरा) – एक चम्मच
धनिया पत्ती (बारीक कटी) – दो चम्मच
चाट मसाला – एक चम्मच
भुने हुए चने का पाउडर – आधा कप
ब्रेड क्रम्ब्स – आधा कप
गर्म मसाला – एक चम्मच
नमक – ज़ाएक़े के हिसाब से
तेल – ज़रूरत भर

तरकीब

कड़ाही में तेल गर्म करें और उसमें प्याज़, हरी मिर्च डालकर अच्छी तरह से भूनें। अब उसमें पनीर, आलू और पका हुआ कॉर्न डालें और कुछ वक़्त तक भूनें। चाट मसाले के अलावा अन्य सभी मसालों को डालें और अच्छी तरह से मिलाने के बाद इस मिक्सचर से टिक्की तैयार कर लें। टिक्की के ऊपर चाट मसाला छिड़कें और गरमागर्म सर्व करें।

सौंठ की चटनी और पास्ता सलाद

पास्ता – सौ ग्राम
प्याज़ (गोल शेप में कटी) – दो
टमाटर (कटा हुआ) – दो
धनिया पत्ती (बारीक कटी) – दो चम्मच
ऑलिव ऑयल – एक चम्मच
काली मिर्च (दरदरी) – एक चम्मच
शिमला मिर्च (कटी हुई) – एक
नमक – ज़ाएक़े के हिसाब से
नींबू का रस – ज़ाएक़े के हिसाब से
ब्रेड क्रम्ब्स – भुना हुआ
सौंठ चटनी – तीन चम्मच
लाल मिर्च – (दरदरी) – दो
मग़ज़ – दो चम्मच

तरकीब

एक बड़े बर्तन में पास्ता उबालें और छानते समय नमक मिला लें। एक बड़े बाउल में सभी कटी सब्ज़ियां मिलाएं। नमक, नींबू, सौंठ चटनी, लाल मिर्च और मग़ज़ मिला लें। अब इसमें सौंठ की चटनी (बाज़ार में बनी-बनाई मिलती है) डाल कर अच्छी तरह हिलाएं। गर्म पास्ता डालें। अगर नमक-मिर्च कम लग रहा हो, तो और डाल लें। चटनी और पासता सलाद तैयार है, प्लेट में सजा कर सर्व कीजिए।

यक़ीन

یقین

■ डॉ. हिना बानो तबातबाई
शिया पी.जी. कालेज, लखनऊ

'यक़ीन' अरबी ज़बान का लफ़्ज़ है मगर अब हमारी उर्दू व हिन्दी ज़बान का भी हिस्सा बन गया है। हिन्दू-मुसलमान दोनों इस लफ़्ज़ को अच्छी तरह पहचानते हैं हिन्दी में इसके मायने भरोसे के होते हैं जो यक़ीन से काफ़ी क़रीब है। अरबी ज़बान में एतेमाद लफ़्ज़ भी यक़ीन ही के मायने में इस्तेमाल होता है। इस आर्टिकल में यक़ीन पर बहस करने का मक़सद यह है कि यह देखें कि हम दीन के सिलसिले में यक़ीन की किस सीढ़ी पर हैं।

ख़ुद क़ुरआने करीम में 28 जगहों पर लफ़्ज़े यक़ीन पर बात की गई है। इस सब्जेक्ट की अहमियत का अंदाज़ा आप इस बात से लगा सकती हैं कि क़ुरआन का आग़ाज़ इस अंदाज़ से हो रहा है, *"अलिफ़ लाम मीम ज़ालि-कल किताबु ला रै-ब"* यह किताब ला रैब यानी यक़ीन वाली है जिसमें कोई शक नहीं, रैब नहीं। इसी यक़ीन के बारे में हदीसे रसूल है कि ईमान एक पेड़ है जिसके रेशे यक़ीन हैं, तना ताक़त है, टहनियाँ शुजाअत हैं, फूल हया है और फल सख़ावत है। जिस तरह किसी भी समझदार इन्सान का कोई अमल बे मक़सद नहीं इसी इरादे को अमल में लाने के लिए यक़ीन ज़रूरी है। अगर बग़ैर यक़ीन के अमल होगा तो कामयाबी के चांसेज़ 100% नहीं होंगे जबकि यक़ीन के साथ किया जाने वाला अमल कामयाबी की गारंटी होता है। यह बात तय है कि यक़ीन का ताल्लुक अमल से है। हज़रत अली[अस] इस सिलसिले में फ़रमाते हैं कि इस्लाम यक़ीन व अमल का नाम है। ग़ैब पर ईमान ही इस्लाम की पहली सीढ़ी है जो मान लें वही ईमान वाले हैं। अमल हमारे यक़ीन का सुबूत है जहाँ यक़ीन है वहीं अमल है जिसको जितना यक़ीन है वह उतना ही अमल करेगा। और यक़ीन उतना ही होगा जितना इल्म होगा। हदीस में है, "इल्म और यक़ीन यह बड़ी दौलत हैं जहाँ इल्म है वहीं यक़ीन है। इल्म के साथ अमल और यक़ीन के साथ इक़दाम ज़रूरी है।

आज जब एक मुसलमान क़ुरआनी अहकाम पर अमल नहीं करता तो उसके पीछे उसकी बे यक़ीनी काम कर रही होती है। जहाँ तक उसको यक़ीन है वह उतना ही अमल करता है जैसे नमाज़ नहीं पढ़ेंगे तो ख़ुदा सज़ा देगा इसलिए नमाज़ पढ़ते हैं। रोज़ा नहीं रखेंगे तो ख़ुदा अज़ाब करेगा इसलिए रोज़ा रखते हैं। मगर ख़ुम्स नहीं देते क्यों कि इसके क़ज़ा करने पर अज़ाब का यक़ीन नहीं है। यतीम का हक़ नहीं देते क्यों कि यतीम का माल या हक़ दबा लेने पर अज़ाब का यक़ीन नहीं है। पर्दा करने वाली औरतें इसलिए पर्दा करती हैं क्यों कि उन्हें अल्लाह के अज़ाब का यक़ीन है और बेपर्दा औरतें इसलिए पर्दा नहीं करतीं क्यों कि उन्हें न अज़ाब का यक़ीन है और न अल्लाह के हुक्म की शिद्दत का कि यह हुक्म कितना अहम है। यह दो छोटी-छोटी मिसालें हैं वरना ऐसे बहुत से अहकाम हैं जो इन्सान बजा नहीं लाता। जहाँ-जहाँ भी नाफ़रमानी है वहाँ-वहाँ बेयक़ीनी ही इसकी वजह है। अगर बंदे को ख़ुदा की सज़ा और जज़ा दोनों पर यक़ीन हो जाए तो न वह ऐसा कोई अमल छोड़ेगा जिसकी जज़ा बेहतरीन है और न ऐसा कोई अमल अंजाम देगा जिसकी सज़ा बदतरीन हो क्योंकि अभी तक मुसलमानों को ख़ुदा की बुज़ुर्गी की मारफ़त हुई ही नहीं है। इमाम सादिक़[अस] फ़रमाते हैं, "जब किसी गुनाह का इरादा करो तो यह न देखो कि गुनाह कितना छोटा है बल्कि यह देखो कि हुक्म कितने बड़े ख़ुदा का है।"

क़ुरआन की आयतों के बारे में रसूले इस्लाम[स] फ़रमाते हैं, "जिसने पूरे क़ुरआन में यह दो आयतें पढ़कर समझ लीं और इन पर अमल कर लिया उसने पूरा इस्लाम सीख लिया, "जिसने ज़र्रा बराबर भी नेकी की है वह उसे देखेगा और जिसने ज़र्रा बराबर बुराई की है वह भी उसे देखेगा।"

दुनिया में तो हो सकता है कि कोई नेकी बरबाद हो जाए, कोई गुनाह करके बच जाए या छिप जाए मगर ख़ुदा के यहाँ यह नहीं होगा। अगर इन्सान इस आयत को यक़ीन के साथ पढ़ ले तो शायद कभी नेकी करके मायूस न हो और न बुराई करे क्यों कि सज़ा पर यक़ीन होगा। ख़ुदा की सज़ा दुनिया की सज़ाओं से बहुत बड़ी होगी मगर हम अपने रहमानो रहीम ख़ुदा के रहमो करम से मायूस नहीं होते। इमाम सादिक़[अस] फ़रमाते हैं कि मुझे इन्सानों के गुनाह करने पर इतना ताज्जुब नहीं होता जितना उनके अल्लाह के करम से मायूस हो जाने पर होता है जबकि उसने बख़्शिश के बहाने बना दिए हैं, बस यक़ीन के साथ उसे पुकारो, वह तुम्हारा जवाब देता है।

औरतों की शरीअत

■ फ़रज़ाना जौहर

मौत और ज़िंदगी ख़ुदा के हाथ में है। यह जुमला हम अपनी ज़िंदगी में बहुत सुनते रहते हैं। लेकिन कभी-कभी ऐसा महसूस होता है कि ज़िंदगी से ज़्यादा मौत मुश्किल हो गई है। हुआ यूँ कि पिछले दिनों हमारे रिश्तेदारों में एक साहब का इंतेक़ाले हो गया। बस जनाब इधर मरहूम का दम निकला, उधर घर वालों पर शरीअतुन्निसा यानी औरतों की शरीअत लागू हो गई।

देखो, ग़म अपनी जगह लेकिन सब लोग होशो हवास में रहना, जो हमारे यहाँ होता आया है वही होगा। फुफो ने कुछ देर तक ज़ोर-ज़ोर से रोने के बाद अपने ऊपर क़ाबू पाते हुए कहा। जी-जी...फुफो! आप बड़ी हैं। बड़ी बेटी ने रोते हुए कहा।

इधर मरहूम इमामबाड़े से क़ब्रिस्तान की तरफ़ रवाना हुए उधर शरीअत के अहकाम जारी होना शुरु हुए। मरहूम के भाई नीचे और ख़ुद मरहूम ऊपरी मंज़िल पर रहते थे, चुनांचे हुक्म जारी हुआ, "देखो घर में दाख़िल होने के बाद कोई नीचे नहीं जाएगा। पहले ऊपर जाएंगे फिर अगर कोई नीचे जाए तो जाए।"

जी अच्छा! एक साथ कई आवाज़ें सुनाई दीं।

"अच्छा फुफो! वह सोयम परसों का ही रखा जाएगा ना?" बड़ी बहू ने पूछा।

"ऐ राहत की दुल्हन! कभी हफ़्ते का भी सोयम हुआ है?!"

"वह... वह, फुफो! आज जुमेरात है ना, इसलिए पूछ रही थी।" बहू बहुत घबरा गई थी। नाज़ुक मामलात जो होते हैं।

"नहीं भई नहीं! इतवार का रखा जाएगा सोयम। और हाँ एक बात और... जो खाने का दस्तरख़्वान लगाएगा वही उठाएगा। और यह आज नहीं बल्कि चालीसवें तक ऐसा ही होगा।" फुफो की बात सुनकर सब एक दूसरे को हैरत से देखने लगे कि दूसरा फ़तवा जारी हुआ, "और जो सोयम का खाना बनाएगा, दसवें, बीसवें और चालीसवें का खाना भी वही बनाएगा।"

लो जी छुट्टी हो गई! अब तो कोई आगे बढ़कर काम करेगा ही नहीं। क्योंकि जिसने काम को हाथ लगाया, वह चालीसवें तक फंस गया।

सोयम की मजलिस मग़रिब की अज़ान से कुछ पहले ख़त्म हो गई। मर्दों में से किसी ने आकर कहा कि मौलाना साहब कह रहे हैं कि फ़ातेहा नमाज़ के बाद करेंगे। यह सुनना था कि जैसे दीन व शरीअत की रूह पामाल हो गई हो। फ़ौरन चिल्लाइं, "नहीं भई नहीं! फ़ातेहा मग़रिब के वक़्त ही होगी। रूह को इंतेज़ार नहीं करवाना चाहिए। जल्दी घर चलो, अज़ान के वक़्त ही फ़ातेहा होगी।"

चुनांचे इधर मोअज़्ज़िन ने *हय-या अलस्सलाह* यानी नमाज़ की तरफ़ आओ कहा, उधर शरीअतुन्निसा ने 'खाने की तरफ़ आ जाओ' की आवाज़ लगाई, और तमाम रिश्तेदार उनकी आवाज़ पर लब्बैक कहते हुए घर की तरफ़ रवाना हो

गए कि चलो ख़ुदा को बाद में ख़ुश कर लेंगे (नमाज़ पढ़कर) पहले मरहूम को ख़ुश कर लें। वैसे बहुत से ऐसे लोग भी इसमें शामिल थे जो आमतौर पर अव्वले वक़्त में नमाज़ पढ़ लेते थे लेकिन फ़ुफो की नाराज़गी और ग़ुस्से के डर से उन्होंने आज खाने ही को आगे रखा।

फ़ातेहा के बाद दस्तरख़्वान लग गए और सब लोग जल्दी-जल्दी अपने लिए जगह बनाने लगे। कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी। और हम यह सोच रहे थे कि मरहूम तो ज़िंदगी भर नमाज़ के बड़े पाबंद थे वहाँ जाकर कैसे हो गए कि नमाज़ के वक़्त खाने का इंतेज़ार करने लगे। ख़ुदा के पास जाकर तो मज़हब से और गहरा लगाव हो गया होगा।

लेकिन यह क्या?... खाना ख़त्म होते-होते एक जगह से शोर शुरु हो गया... शायद किसी को खाने में कोई चीज़ कम मिली है या कोई और वजह है, हम ने भी कान उस तरफ़ लगाने की कोशिश की। आवाज़ की तरफ़ जो बढ़े तो पता चला कि शरीअतुन्निसा का अज़ाब छोटी बहू पर आ गया है, "ऐ मैंने कहा भी था कि जो दस्तरख़्वान लगाएगा वही बढ़ाएगा।"

"वह... फ़ुफो! भाभी का छोटा वाला बेटा बहुत ज़ोर से रो रहा था। मैंने कहा कि आप उसको देख लें मैं दस्तरख़्वान उठा लेती हूँ।" रंगे हाथों पकड़ी गई बहू ने हकलाते हुए सफ़ाई पेश की। "अरे रो रहा है तो चुप हो जाएगा। अगर इस तरह से मनमानी होती रही तो मेरा तो यहाँ चालीसवें तक रुकना मुश्किल हो जाएगा। फिर जैसी तुम लोगों की मर्ज़ी।" फ़ुफो ने आख़िरी चोट की।

बड़ी बहू जल्दी से बच्चे को मियाँ के हवाले करके फ़ुफो के पास आई और बोली... "फ़ुफो ग़लती मेरी ही थी, मुझे ही नहीं जाना चाहिए था। अब जैसे आप कहेंगी हम लोग उसी तरह करेंगे।" (उसने दिल में सोचा होगा कि चालीस दिन तो गुज़र ही जाएंगे लेकिन ज़िंदगी भर जो बातें सुनने को मिलेंगी उन्हें बर्दाश्त करना मुश्किल होगा)।

"फ़ुफो दसवां किस दिन रखना है? अभी एलान करना है।" मरहूम की बड़ी बेटी ने सवाल किया।

"जुमेरात का रख लो। और याद रहे जिस दिन एक चीज़ हो जाए उस दिन दूसरा प्रोग्राम नहीं होना चाहिए।" एक नया फ़तवा...।

हम जो काफ़ी बातें बर्दाश्त कर रहे थे, अब हम से बर्दाश्त न हो सका और हम ने मैदान में कूदने का फ़ैसला कर लिया। "फ़ुफो अगर जमेरात को ही बीसवाँ रख लिया जाए तो क्या होगा?"

फ़ुफो ने हमारी तरफ़ ग़ुस्सैली निगाहों से देखा कि यह कौन गुस्ताख़ है जो उनकी सलतनत में सवाल कर रहा है। हम भी उनकी निगाहों से कुछ लम्हों के लिए तो गड़बड़ाए लेकिन फिर दिल कड़ा करके उनकी तरफ़ देखने लगे।

"ऐ होने को क्या होगा। महमूद के घर वालों ने बात नहीं मानी थी, बाप के इंतेक़ाल के चालीस दिन के अंदर अंदर माँ भी मर गई।"

वह ... वह, महमूद भाई की अम्मी... हमें याद आया। "फ़ुफो वह तो बेचारी ख़ुद दो साल से मौत और ज़िंदगी की साँसें गिन रही थीं, वैसे भी बोनस में चल रही थीं।"

"ऐ बस रहने दो, हमारे हाँ तो हमेशा से यही होता आया है, अगर तुम लोगों को एतेराज़ है तो जो जी चाहे करो, मुझ से कुछ पूछने की ज़रूरत नहीं है।" आख़िरी जुमला सुनते ही घर की बहुएं घबरा गईं और हमें दूर ले जाकर समझाया-बुझाया और दूसरी तरफ़ फ़ुफो को राज़ी किया। लेकिन हम सोचते रहे कि इस पढ़े-लिखे दौर में भी ख़ुशी और ग़म के मौक़े पर कुछ घरानों में शरीअतुन्निसा यानी औरतों की शरीअत, शरीअते मोहम्मदी से आगे-आगे होती है। ऐसा कब तक चलेगा? इसके ख़िलाफ़ आवाज़ उठाना आपके और हमारे हक़ में बेहतर है।

बद ज़बानी से बचो

■ डॉ. कल्बे सिब्तैन नूरी

इमाम मोहम्मद बाक़िर[अ०] ने फ़रमाया है, "लोगों के साथ इस तरह बात-चीत करो, जिस तरह तुम पसंद करते हो कि तुम्हारे साथ बातचीत की जाए। अल्लाह तआला लानत करने वाले, गालियाँ देने वाले और मोमिनों को ताने देने वाले, बद अमल और बद ज़बान इन्सान और ज़िद्दी फ़क़ीर को पसंद नहीं करता है।"

बिहारुल अनवार, जिल्द-78

कहा जाता है कि तलवार का ज़ख़्म तो भर जाता है लेकिन ज़बान से दिया हुआ ज़ख़्म कभी नहीं भरता। इसलिए ज़बान के इस्तेमाल में बहुत एहतियात बरतना चाहिए और कोशिश करना चाहिए कि हमारी ज़बान से किसी को तकलीफ़ न पहुंचे। हम ज़बान के ज़रिए दूसरों को अपना दोस्त भी बना सकते हैं और दुश्मन भी। अगर सबके साथ मोहब्बत, अख़लाक़ और मीठी ज़बान में बातचीत की जाए तो इसका असर ही दूसरा होता है और इन्सान की पॉपुलारिटी भी बढ़ जाती है। कितने लोग हैं जिनको सिर्फ़ उनकी मीठी ज़बान की वजह से याद किया जाता है। ज़बान का सही इस्तेमाल इन्सान की बहुत सी कमज़ोरियों पर भी पर्दा डाल देता है। जनाबे लुक़मान[अ०] ने भी इस हक़ीक़त को बयांन किया था कि अगर ज़बान का सही इस्तेमाल किया जाए तो इससे बेहतर कोई चीज़ नहीं और अगर ज़बान का ग़लत इस्तेमाल किया जाए तो इससे बुरी कोई चीज़ नहीं। इसीलिए इस हदीस में बद ज़बानी और बद कलामी से रोका गया है।

बदगुमानी से मुक़ाबला

आयतुल्लाह मकारिम शीराज़ी

बदगुमानी के बारे में एक एतेराज़ यह किया जाता है कि बदगुमानी आमतौर से एक ऐसी चीज़ नहीं है कि जिस से आसानी से छुटकारा हासिल कर लिया जाए बल्कि ज़्यादा तर यह सिफ़त किसी मंज़र को देखने, कोई बात सुनने या कोई पिछला वाक़िआ याद आ जाने की वजह से पैदा होती है हालांकि उस शख़्स का उस पर कोई कंट्रोल नहीं होता है। इस हालत में किस तरह बदगुमानी करना शरीअत में हराम और मना हो सकता है?

मशहूर रिवायत

"तीन चीज़ों से काई भी नहीं बच सकताः फ़ाले बद निकालना, हसद और बदगुमानी करना।" [1]

इस हदीस में भी इसी तरफ़ इशारा किया है।

उलमा ने इस एतेराज़ के अलग-अलग जवाब दिए हैं:

1- कुछ लोगों का ख़याल है कि ख़ुद बदगुमानी हराम नहीं है। वह अपनी इस बात को नीचे लिखी हदीस से साबित करते हैं:-

"तीन ग़ैर अख़्लाक़ी चीज़ें मोमिन के अंदर पाई जाती हैं जिनसे वह भाग सकता है और बदगुमानी से बचने का तरीक़ा यह है कि उसके असर को अपने ऊपर न पड़ने दे। [2]

2- कुछ लोग कहते हैं कि बदगुमानी के हराम होने का मतलब यह है कि दिल पर उसके असर को न पड़ने दिया जाए यानी यह कि अपने दिल में बदगुमानी को न पनपने दे जो ज़ाहिर है कि यह एक इख़्तियारी चीज़ है। दूसरे यह कि वह शख़्स जिसके ख़िलाफ़ बदगुमानी पैदा हुई है, उसके साथ नफ़रत और बुग़्ज़ का एहसास न करे। इसलिए बदगुमानी के पैदा न होने का मतलब यही मायने हैं जो अभी ऊपर बयान किए गए हैं जिसमें ज़ेहन और बाहर की दुनिया दोनों आ जाते हैं।

इसमें कोई शक नहीं है कि यह दोनों मायने बदगुमानी से बचने से मुताल्लिक़ आयत और हादीसों के ज़ाहिरी मायने के ख़िलाफ़ हैं क्योंकि इस आयत और रिवायत में ख़ुद सूए ज़न से बचने के लिए कहा गया है। यहाँ ऐसी कोई बात नहीं कहीं गई है कि बदगुमानी को अपने दिल में न पनपने दो कि जिस से बहरहाल बचा जा सकता है।

हाँ! बदगुमानी को दिल में जगह देना एक इख़्तियारी चीज़ है लेकिन नफ़रत और बुग़्ज़ ऐसा मसला नहीं है। नफ़रत और बुग़्ज़ पर इन्सान को कोई कंट्रोल नहीं होता।

3- हक़ीक़त यह है कि यूँ तो ज़ाहिर में बदगुमानी एक इख़्तियारी चीज़ नज़र नहीं आती है लेकिन इसको बाक़ी रखना या न रखना बहरहाल इन्सान के कंट्रोल में है क्योंकि आमतौर पर बदगुमानी ऐसी वजहों से पैदा होती है जो हक़ीक़ी नहीं होतीं बल्कि बदगुमानी की असल वजह वह जल्दबाज़ी होती है जो इन्सान किसी चीज़ या वाक़िए को देखकर फ़ौरन नतीजा निकालता है और इसी लिए रिवायात में इस सिलसिले में बहुत ताकीद होती है कि इन्सान अपने मुसलमान भाईयों के बारे में सही नज़रिए बनाने की कोशिश करे और ग़लत फ़हमियों से ख़ुद को बचाए।

हज़रत अली(अ) फ़रमाते हैं, "अपने भाई की ज़बान से सुनी गई किसी भी बात के बारे में उस वक़्त तक बदगुमानी न करो जब तक कोई मुनासिब रास्ता मौजूद न हो। [3]

इसलिए वह चीज़ जो इन्सान के कंट्रोल से बाहर है वह सिर्फ़ और सिर्फ़ वह ग़लत ख़यालात और सोच है जो ख़ुद बख़ुद ज़ेहन में पैदा हो जाती है लेकिन बदगुमानी को दिल में बाक़ी रहने देना बहरहाल इन्सान के कंट्रोल में है और यह नज़रिया आयत और रिवायात से बाक़ाएदा तौर पर साबित होता है। इसलिए हमारे पास ऐसी कोई दलील नहीं है कि हम इसको आयत व रिवायात के ज़ाहिरी मायने के ख़िलाफ़ फ़र्ज़ करें।

"अपने भाई से मुताल्लिक़ अपनी आँख और कान को झुठला दो।" [4]

इमाम जाफ़र सादिक़ की यह हदीस भी इसी तरफ़ इशारा कर रही है कि इन्सान कोई सही और मुनासिब वजह तलाश करके और अपने ज़ेहन से ग़लत ख़यालात को झिटक दे।

बदगुमानी का इलाज

यह बात तो अपनी जगह साबित है कि रूहानी, जिस्मानी और अख़लाक़ी बीमारियों का इलाज उनकी पैदाइश की वजह में तलाश किया जाना चाहिए।

इस तरह अगर बदगुमानी की पैदाइश की वजहों को मद्दे नज़र रखा जाए तो यह रिज़ल्ट्स सामने आते हैं:-

बदगुमानी के ख़ात्मे के लिए हर चीज़ से पहले ज़रूरी है कि हम अपनी इस्लाह करें ताकि अगर दूसरों का ख़ुद से मुक़ाबला करें तो यह उनके गुमराह और गुनाहगार साबित होने की वजह न बन जाए और जब तक हम अपनी इस्लाह में मशग़ूल रहें इस नुक्ते की तरफ़ हमेशा ध्यान रखें कि हम दूसरों को भी अपने ही जैसा फ़र्ज़ करें। हो

सकता है कि दूसरे हम से बहुत बेहतर हों।

2- अपने आसपास के माहोल को पाकीज़ा रखें और बुरे लोगों के साथ उठना-बैठना बंद कर दें। क्योंकि इस तरह की सोसाइटी भी अच्छे और नेक लोगों के ख़िलाफ़ बदगुमानी पैदा कर देती है। इस बात का भी ध्यान रखें कि इस तरह की सोसाइटी जहाँ दूसरे बहुत से ऐबों और बुराइयों के पैदा होने की वजह बनती है वहीं दूसरे लोगों की शख़्सियतों को आज़माने से मुताल्लिक़ हमारे नज़रियात को भी बंद कर देती है और हम दूसरे लोगों को पहचानने में बहुत बड़ी-बड़ी ग़लतियाँ कर बैठते हैं। यह ग़लतियाँ सिर्फ़ अख़लाक़ी व रूहानी नुक़सान ही नहीं पहुँचाती हैं बल्कि बदगुमानी के ज़रिये हमें दूसरे नेक लोगों की अख़लाक़ी व फ़िक्री नेमत से भी फ़ायदा नहीं उठा पाते हैं।

अगर बचपने में हमारे आस-पास का माहोल इसी वजह से ख़राब रहा हो और इसी ख़राब माहोल की वजह से हमारे ज़ेहन में उसी वक़्त से कुछ ग़लत नज़रियात बन गए हों और वह नज़रियात आज तक हमारे ज़ेहन में मौजूद हों तो ऐसे ग़लत ख़यालात व नज़रियात को ज़ेहन से दूर निकाल फेंकने के लिए ज़रूरी है कि अच्छे और नेक लोगों की बायोग्राफ़ी की स्टडी करें और उनके साथ उठें-बैठें ताकि आहिस्ता-आहिस्ता बचपने में पैदा हो जाने वाले ग़लत ख़यालात को दूर किया जा सके। इस सिलसिले में मशहूर तारीख़ी नेक और अच्छे लोगों के हालाते ज़िंदगी की स्टडी करते रहना बहुत फ़ायदेमंद है।

3- ऐसे इंडिविजुअल और सोशल नुक़सानों को भी बार-बार अपने ज़ेहन में दोहराते रहें जो बदगुमानी की वजह से हमारे समाज को पहुँचते हैं। इस हक़ीक़त की तरफ़ भी ध्यान देते रहें कि बदगुमानी से जहाँ हमारी ''इंतेक़ाम लेने की हिस'' या ''ख़ुद परस्ती'' को वक़्ती सुकून मिलता है और हमारे अंदर एक छोटा इत्मिनान पैदा हो जाता है वहीं इस से हमें वह नुक़सान भी पहुँचते हैं जिनको हम दूर नहीं कर सकते।

4- अगर हमारी बदगुमानी और बदबीनी की वजह दूसरों की अख़लाक़ी बुराईयाँ जैसे कीना, ख़ुद पसंदी, ख़ुद परस्ती, उनका अपने कामों को सही ठहराना और अपने ज़मीर की आवाज़ से भागना वग़ैरा हैं तो हमें चाहिए कि अपने अंदर झांक कर उन वजहों को तलाश करें। क्योंकि यह नुक्ता अख़लाक़ी बुराईयों के इलाज में बहुत अहम है कि इस तरह की चीज़ों में कि जिनमें इन्सान के सब-कांशस में पैदा होने वाले कुछ फ़ैक्टर उसके कामों और सोच पर बहुत असरअंदाज़ होते हैं, हमें चाहिए कि अपने अंदर झांकने के ज़रिए उन फ़ैक्टर्स को दूर करें। यह हमारी हालत के बेहतर होने में बहुत बड़ा रोल अदा करता है।

नोटः- आख़िर में इस बात की तरफ़ इशारा करना भी ज़रूरी है कि एक सूरत ऐसी भी है जब बदगुमानी सही लगने लगती है और ऐसा उस वक़्त बहुत होता है जब किसी समाज के अक्सर लोग बुरे और गुमराह हो जाएं। ऐसे गुमराह समाज में लोगों से मुताल्लिक़ हुस्ने ज़न नहीं किया जा सकता क्योंकि हर उस शख़्स के बारे में जिसकी हालत मालूम नहीं है, गुमराह और फ़ासिद होने के चांसेज़ पाए जाते हैं, लेकिन ध्यान रहे कि ऐसे समाजों में भी इन्सान बदगुमानी के किसी भी असर को अपने ऊपर न पड़ने दे यानी ज़रूरी एहतियात करते हुए अपने उस बरताव से परहेज़ करे जिस बरताव से दूसरे लोगों के बारे में बदगुमानी का एहसास होता हो। हमें इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि जिस शख़्स के हालात का हमें इल्म नहीं है शायद वह समाज के उन अच्छे और नेक लोगों में से हो जो कम हैं साथ ही इस चीज़ को उन्हीं बुराईयों और गुनाहों में महदूद रखना चाहिए समाज की अकसरियत जिनकी शिकार है और दूसरी तमाम चीज़ों में उसी हुस्ने ज़न वाले उसूल पर अमल करना चाहिए।

हज़रत अली[अ] की एक मशहूर हदीस भी इसी तरफ़ इशारा करती है, ''फ़साद जब हर तरफ़ फैल जाए तो लोगों को एक-दूसरे के लिए हुस्ने ज़न, धोखा और फ़रेब खाने की वजह बन जाता है।[5]

1-विहार, 58/320, 2-विहार, 75/201, 3-काफ़ी, 2/362, 4-काफ़ी, 8/147, 5-विहार, 75/197

हमसफ़र
इस्लामिक
मैरिज ब्यूरो

हमसफ़र इस्लामिक मैरिज ब्यूरो सभी मज़हबों और क़ौमों के अच्छे रिश्ते फ़राहम कराता है। सरकारी मुलाज़िम, बिज़नेस-मैन, डॉक्टर, इंजीनियर, दस्तकार, एजुकेटेड व दीनदार और बाअदब लड़के/लड़कियाँ, तलाक़शुदा व बेवा औरतों के रिश्तों के लिए राब्ता क़ायम करें।

Timings
10-2 AM & 5-9 PM
Sunday Closed

सैय्यद मोहसिन रज़ा काज़मी
09415180517, 09935315386, 07499827603
mohsin78651@yahoo.com
humsafarislamicmarriage@gmail.com
www.humsafarmarriage.com

ख़ुम्स 20%

साल और ख़र्च

■ अल्लामा ज़ीशान जवादी

ख़ुम्स के सिलसिले में दो बातें सबसे ज़्यादा ख़ास हैं। एक मसला साल का है कि साल किसे कहते हैं और कब शुरु होता है और दूसरा मसला ख़र्चों का है कि वह कौन-कौन से ख़र्चे हैं जिनके बाद बच जाने वाले माल पर ख़ुम्स वाजिब होता है।

जिस दिन से इन्सान की आमदनी शुरु होती है और फ़ाएदे का सिलसिला शुरु होता है उसी दिन से साल शुरु हो जाता है। अगर इन्सान के पास आमदनी के कई ज़रिए हैं तो हर चीज़ का साल अलग होगा। वैसे इन्सान यह भी कर सकता है कि अपने लिए एक साल तय कर ले और फिर सारी आमदनियों और ख़र्चों का इकटठा हिसाब करके बचत का ख़ुम्स निकाल दे। जैसे एक इन्सान खेती भी करता है और बिज़नेस भी, मकान किराये पर देता है और मज़दूरी भी करता है तो सबका अलग-अलग हिसाब करने के बजाए एक साल तय करे और उसके आख़िर में सबकी कुल आमदनी में से जो बच जाए उसका ख़ुम्स निकाल दे।

अगर किसी इन्सान को अपनी ज़िंदगी गुज़ारने के लिए पूंजी या माल की ज़रूरत है और उसकी आमदनी पूंजी के बराबर ही है कि या उसी को पूंजी बनाकर काम करे या साल भर के अंदर खा-पी कर ख़त्म कर दे तो अगर पूंजी की मिक़दार साल के ख़र्च के बराबर है तो उसे कारोबार की पूंजी क़रार देने से उस मिक़दार का ख़ुम्स वाजिब नहीं होगा। इसके बाद जब साल ख़त्म हो जाने पर उसको कारोबार का फ़ायदा होगा और उसमें इज़ाफ़ा होगा तो उस इज़ाफ़े का ख़ुम्स वाजिब होगा। लेकिन अगर किसी को अपनी ज़िंदगी गुज़ारने के लिए पुंजी या माल की ज़रूरत है और वह माल साल के ख़र्च से ज़्यादा है तो जितना साल के ख़र्च के बराबर सरमाय-ए-तिजारत माना है उसका ख़ुम्स वाजिब नहीं होगा और जो इस मिक़दार से ज़्यादा है उसका ख़ुम्स निकालना होगा।

अब अगर किसी को ऐसी पूंजी की ज़रूरत नहीं है और न उसे बिज़नेस करने की ज़रूरत है और बिज़नेस सिर्फ़ उसका शौक़ है तो जितना माल भी बिज़नेस में लगाएगा उसका ख़ुम्स निकालना होगा क्योंकि उसका शुमार ख़र्चों में नहीं है और न यह इन्सान की ज़रूरत है।

इन्सान अपने ख़ुम्स का साल बदलना चाहता है तो बदल सकता है लेकिन जिस तारीख़ को यह इरादा किया है उस तारीख़ तक का हिसाब करके ख़ुम्स निकाल दे। इसके बाद तारीख़ बदल दे। (लेकिन आयतुल्लाह ख़ामेनई के मुक़ल्लिद अपने ख़ुम्स का साल तबदील नहीं कर सकते।) साल के बारे में इन्सान अरबी, अंग्रेज़ी, रूमी, फ़ारसी कोई भी साल चुन सकता है।

ख़र्चे

इन्सान के ख़र्चे दो तरह के हैं: (1) वह ख़र्चे जो आमदनी की राह में ख़र्च हुए हैं। (2) वह ख़र्चे जो साल की ज़रूरतों के लिए हुए हैं। पहली क़िस्म से मुराद वह ख़र्चे हैं जिन्हें फ़ायदा हासिल करने के लिए सर्फ़ किया जाता है जैसे मज़दूर, दलाल, क्लर्क और वाचमैन की मज़दूरी, दुकान का किराया, हुकूमत का टैक्स वग़ैरा कि इन तमाम चीज़ों को फ़ायदे में से निकाल कर बाक़ी का ख़ुम्स निकाला जाए। बल्कि इस राह में जो नुक़सान हुए हैं उनकी भरपाई भी फ़ायदे ही से की जाएगी। मिसाल के तौर पर पैसा कमाने में खेती वग़ैरा के औज़ारों या गाड़ी वग़ैरा में जो नुक़सान पैदा हो गया है और पुर्ज़े घिस जाने से जो कमी पैदा हो गई है, इस कमी को निकालने के बाद ही बाक़ी को फ़ायदा कहा गया है और उसका ख़ुम्स वाजिब होगा। जैसे एक इन्सान ने दो लाख रुपये में गाड़ी ख़रीदी और उसे साल भर के लिए चालीस हज़ार रुपये किराये पर दे दिया और साल ख़त्म होने पर गाड़ी की क़ीमत एक लाख अस्सी हज़ार हो गई तो इसका मतलब यह है कि फ़ायदा चालीस हज़ार का नहीं बल्कि सिर्फ़ बीस हज़ार का हुआ है और उसी बीस हज़ार का ख़ुम्स भी वाजिब होगा। बाक़ी बीस हज़ार तो आमदनी की राह

में गुम हो गए हैं।

दूसरी क़िस्म से मुराद ख़र्चों को साल के ख़र्च में गिना जाएगा बशर्ते कि इन्सान अपनी हैसियत के मुताबिक़ ख़र्च करे। हैसियत से ज़्यादा ख़र्च करने को इसराफ़ और फ़ुज़ूलख़र्ची कहते हैं और इसराफ़ ख़र्च में शुमार नहीं होता बल्कि इन्सान उस से गुनाहगार भी होता है।

अब अगर किसी इन्सान ने ज़रूरत से कम ख़र्च किया है और कंजूसी करके ज़्यादा बचा लिया है तो कुल बाक़ी का ख़ुम्स निकालना होगा और यह कहने का हक़ नहीं होगा कि मैं कंजूसी न करता तो इतनी बचत न होती इसलिए उसी बचत का ख़ुम्स निकालूँगा जो कंजूसी न करने की सूरत में होती क्योंकि इस्लाम में कंजूसी भी कोई अच्छी बात नहीं है।

याद रहे कि कभी-कभी माल बज़ाहिर ख़र्च हो जाता है लेकिन उसका शुमार साल के ख़र्च में नहीं होता है इसलिए ऐसी सूरत में उस माल का ख़ुम्स निकालना होगा क्योंकि यह दरहक़ीक़त पैसे की बदली हुई शक्ल है। जिस तरह कोई इन्सान बाँड वग़ैरा ख़रीदे या आइंदा साल की ज़रूरतों के लिए सामान ख़रीद ले या मौत के ख़याल से कफ़न वग़ैरा ख़रीद ले और साल के बीच मौत न हो तो ऐसे कफ़न को भी इस साल के ख़र्च में नहीं गिना जाए और उसका ख़ुम्स अदा करना ज़रूरी होगा।

ध्यान रहे कि इस्लाम में कफ़न ख़रीद कर रखने पर काफ़ी ज़ोर दिया गया है बल्कि यह ताकीद भी की गई है कि उसे कभी-कभार देखता भी रहे क्योंकि इस तरह मौत का ख़याल ज़ेहन में रहता है और ख़याले मौत इस्लाहे नफ़्स का बेहतरीन ज़रिया है... लेकिन इसका यह मतलब बिल्कुल नहीं है कि इस कफ़न का ख़ुम्स माफ़ हो जाएगा और इन्सान मौत को याद करने के बजाए इमाम के हक़ को ग़सब कर बैठे।

ख़र्चों की इस तफ़सील से यह बात भी साफ़ हो जाती है कि अगर इन्सान ने एक साल की आमदनी से मकान बनाने का सामान ख़रीद लिया और दूसरे साल उस से कंस्ट्रक्शन कराया तो साल ख़त्म होने पर उस सामान का ख़ुम्स वाजिब होगा क्योंकि मकान को ख़र्चों में शुमार किया गया है, मकान के सामान को नहीं। सामान तो दरहक़ीक़त पैसे की बदली हुई शक्ल है।

यही हाल लड़कियों के जहेज़ या अपनी शादी के सामान का है कि साल के अंदर शादी न हुई तो ख़रीदे गए सामान का ख़ुम्स निकालना होगा। यह और बात है कि अगर कोई शख़्स ऐसा मोहताज है कि एक दफ़ा में सारा जहेज़ जमा नहीं कर सकता और मजबूर है कि साल के साल जमा करे और इस एतेबार से ज़रूरत भर जमा किया है तो इस मिक़दार का ख़ुम्स वाजिब नहीं है।

यहीं यह बात भी साफ़ हो जाती है कि ख़ुम्स की अदाएगी की रक़म भी सालाना ख़र्चों में शुमार नहीं होती है... यानी उसूली तौर पर इन्सान का फ़र्ज़ है कि साल ख़त्म होने पर बचत का पांचवा हिस्सा अदा करे... अगर सौ रुपये बच गए तो उसी में से बीस रुपये ख़ुम्स के तौर पर अदा करे। अब अगर उसने सारे सौ रुपये ख़र्च कर दिए और यह तय किया कि अगले साल की आमदनी में से बीस रुपये अदा कर देंगे और इसी तरह अदा भी कर दिया तो साल ख़त्म होने पर उस बीस रुपये को भी अगली बचत में हिसाब करेगा और उसका ख़ुम्स भी अदा करेगा... यानी पिछली बचत का ख़ुम्स उसी बचत से निकाला जाएगा तो बीस फ़ीसदी होगा और अगले साल की आमदनी में से निकाला जाएगा तो 24% होगा...कि नई अमदनी में से बीस रुपये पिछले साल के हिसाब में न निकाल दिये होते तो यह भी इस साल की बचत में गिने जाते।

HK

KAZIM
Zari Art

All Kinds of
Sarees, Suits
& Lehanga Chunri

Hata Dhannu Beg
Kazmain Road Lucknow
Contact No.
0522-2264357, 9839126005
8687926005

मुसलमानों का सुनहरा दौर

■ डॉ. अंजुम क़ैसर

अरब मुसलमानों ने सातवीं सदी में ख़ालिद बिन वलीद की लीडरशिप में फ़ारसी सासानी सलतनत और बाज़ंतीनी रूमी सलतनत के आधे से ज़्यादा हिस्से को फ़तह कर लिया था। इस तरह उन्होंने मिडिल-ईस्ट, सेंट्रल एशिया और नार्थ अफ़्रीक़ा तक फैली हुई अरब सलतनत की बुनियाद रखी जो कि बाद में पाकिस्तान, साउथ इटली और जज़ीरा नुमा आइबेरियाई इलाक़े तक फैल गई थी।

रौसाना गोरीनी लिखते हैं...

अकसर हिस्टोरियंस के मुताबिक़, इब्नुल हैसम फ़ादर ऑफ़ मार्डन साइंटिफ़िक मेथड था। उसने अपनी किताब से मनाज़रयात को इस तरह से पेश किया कि आने वाले वक़्त के लिए उसके मायने ही बदल गए। उसने अपनी फ़ील्ड में तजुरबों के इस्तेमाल को एक उसूल बनाया और उसको सुबूत की बुनियाद के तौर पर लिया। उसके एक्सप्रीमेंट सिर्फ़ मिसालों पर टिके नहीं होते थे बल्कि उसके तजुरबे दोहराए जा सकते थे।

रॉबर्ट ब्रे-फ़ोल्ट अपनी किताब The Making of Humanity में लिखते हैं...

आज की साइंस ने सदियों पुरानी अरब और मुसलमान साइंसी कोशिशों से सिर्फ़ हैरतअंगेज़ ईजादें या फिर इंक़ेलाबी थ्योरी ही नहीं ली बल्कि आज की साइंस उस कल्चर की क़र्ज़दार है। इसके वुजूद का सेहरा उसी कल्चर व तहज़ीब को जाता है। पुरानी दुनिया प्री-साइंटिफ़िक थी। यूनानी एनॉटमी और मैथ्स उन लोगों के लिए यूँ थी जैसे कोई ग़ैर मुल्की चीज़ हो और यूनानी कल्चर में उसको जगह न मिल सकी हो, यूनानियों ने थ्योरियाँ बनाईं और उनको सिस्टमेटिक भी बनाया मगर रिसर्च और तहक़ीक़ के तरीक़े, इल्मी ख़ज़ानों को ज़ख़ीरा, साइंस के चुने हुए तरीक़े, तफ़सीली मुशाहेदात, तजुरबाती पूछगछ... यह सब यूनानी मिज़ाज के लिए नए थे। जिसको हम आज साइंस कहते हैं यूरोप में उसका जन्म पूछ-गछ और रिसर्च के एक नए ज़्बे से हुआ था। तहक़ीक़, नाप-तौल और तजुरबों के नए तरीक़े, ऐसे तरीक़े जिस से यूनानी नावाक़िफ़ थे। यह तरीक़े हमें अरबों (मुसलमानों) ने सिखाए। मार्डन दुनिया में अरब कल्चर की सबसे अहम कोशिश साइंस ही है। मगर इसके अलावा भी इस्लामी कल्चर ने पूरी ज़िंदगी के बहुत से पहलुओं पर गहरे असर छोड़े हैं।

जार्ज सॉर्टन, जो साइंस के मशहूर हिस्टोयिन हैं, लिखते हैं...

मिडिल-एजेस की सबसे अहम कामयाबी तजुरबाती जज़्बे की ईजाद थी। और इसका सेहरा बारहवीं सदी तक के मुसलमानों को जाता है।

ओलेवर जोसफ़ लॉज अपनी किताब Pioneers of Science में लिखते हैं...

ओल्ड और मार्डन साइंस में सिर्फ़ एक असरदार रिश्ता है और वह अरबों की वजह से है। यूरोप की साइंसी हिस्ट्री में क़रीब एक हज़ार साल का ज़माना डार्क-एज के नाम से जाना जाता है और उस दौर में अरबों के अलावा कोई भी ख़ास साइंटिस्ट नहीं था।

मोहम्मद इक़बाल अपनी किताब The Reconstruction of Religious Thought in Islam में लिखते हैं...

तजुरबाती तरीक़ा, अक़्ल व दलील और तजुरबा जिसको अरबों ने पहचनवाया, वह मिडिल-एजेस में साइंस की तेज़-रफ़्तार तरक़्क़ी की वजह बना। बहुत से अहम इंस्टिट्यूट्स जो पुरानी दुनिया में मौजूद नहीं थे, उनकी बुनियाद मिडिल-एजेस की इस्लामी दुनिया ने रखी। उनमें आम हास्पिटल, ज़ेहनी मरीज़ों के हास्पिटल, पब्लिक लाइब्रेरी, डिग्री जारी करने वाली इल्मी युनिवर्सिटी और एनॉटमिकल इंस्टिट्यूट शामिल हैं। पहली युनिवर्सिटी जिसने डिपलोमे जारी किए, वह मिडिले-एजेस की इस्लामी दुनिया का हास्पिटल और मेडिकल युनिवर्सिटी थी। यह डिपलोमे नवीं सदी में जारी किए गए।

सर जॉन बेगोट ग्लोब लिखते हैं...

मामून रशीद के दौर में बग़दाद में मेडिकल

स्कूल बहुत एक्टिव थे। हारून रशीद की ख़िलाफ़त में बग़दाद में पहला पब्लिक हास्पिटल खोला गया जहाँ हर मरीज़ का इलाज मुफ़्त होता था। जैसे-जैसे सिस्टम बनता चला गया, डॉक्टर और माहिर, सर्जन स्टूडेंट्स को लेक्चर देने लगे और फिर उन स्टूडेंट्स को डिपलोमे जारी करते थे जिनको वह मेडिकल प्रेक्टिस के क़ाबिल समझते थे। मिस्र में पहला हास्पिटल 872 में खुला और उसके बाद ऐसे हास्पिटल पूरी इस्लामी सलतनत में स्पेन और ईरान, हर जगह खुलने लगे।

गिनीज़ बुक ऑफ़ रिकार्ड में लिखा है कि...

दुनिया की सबसे पुरानी युनिवर्सिटी मराकश की अल-क्राउन युनिवर्सिटी है जो 859 में खुली थी। इसी तरह दसवीं सदी में क़ाहिरा, मिस्र में बनने वाली अल-अज़हर युनिवर्सिटी अलग-अलग सब्जेक्ट्स पर डिग्रियाँ जारी करती थी। इसको आमतौर पर पहली मुकम्मल युनिवर्सिटी समझा जाता है।

इस्लामी दुनिया की लाइब्रेरी, पुरानी दुनिया की लाइब्रेरी जैसी नहीं थी कि जिसमें सिर्फ़ किताबें इकटठी करके रख दी जातीं। आज के दौर की लाइब्रेरी की तरह पब्लिक लाइब्रेरी थी जहाँ से किताबें कुछ देर के लिए ली जा सकती थीं, यह साइंस और रिसर्च का सेंटर थी और पढ़ने-लिखने की जगह थी। लाइब्रेरी केटलॉग का नज़रिया भी इन्हीं मुस्लिम लाइब्रेरियों से मार्डन दुनिया में आया, जहाँ किताबों को सब्जेक्ट्स के मुताबिक़ रखा जाता था।

इस्लामी सुनहरी दौर की एक और अहम बात यह थी कि उस वक़्त बहुत से मुसलमान ऐसे थे जो एक साथ कई सब्जेक्ट्स के माहिर होते थे। आज उनको Polymath कहा जाता है। यह ऐसे आलिम और स्कॉलर थे जिन्होंने इल्म की बहुत सी फ़ील्ड्स में काम किया। उनको उस वक़्त हकीम कहा जाता था और यह मज़हबी और सेकोलर सब्जेक्ट्स की अलग-अलग ब्राँचों पर कंट्रोल रखते थे। ऐसे मुस्लिम स्कॉलरों की उस दौर में कोई कमी नहीं थी मगर ऐसे स्कॉलर नहीं मिलते थे जो सिर्फ़ किसी एक ब्राँच के माहिर हों। उनमें अल-बीरूनी, अल-जाहिज़, अल-किंदी, अल-राज़ी, इब्ने सीना, अल-इदरीसी, इब्ने बजा, उमर ख़ैय्याम, इब्ने ज़हर, इब्ने तुफ़ैल, इब्ने रुश्द, अस्सुयूती, जुबैर, अल-ख़वारज़मी, बनू मूसा, अब्बास बिन फ़रनास, अल-फ़ाराबी, अल-मसूदी, अल-मुक़द्दसी, इब्नुल हैसम, अल-ग़ज़ाली, अल-ख़ाज़ीनी, अल-जज़ारी, इब्नुन्नाफ़िस, अत-तूसी, इब्नुश्शातिर, इब्ने ख़लदून और तक़ीउद्दीन कुछ ज़्यादा मशहूर नाम हैं।

सुनहरी दौर के बाद मुसलमानों का डिमोशन

आम ख़याल यह है कि बारहवीं और तेरहवीं सदी से मुसलमान साइंसदानों की तादाद में कमी आना शुरु हो गई थी। कहा जाता था कि इस्लामी कल्चर तब भी साइंसदान पैदा कर रहा था मगर बाक़ी दुनिया के मुक़ाबले में उनकी हैसियत पहले सी नहीं थी। आज की तहक़ीक़ इस रिवायती नज़रिये पर सवाल उठाती है और उस दौर के बाद भी जारी रहने वाली मुस्लिम एनॉटामिकल तहक़ीक़ की तरफ़ इशारा करती है जो सोलहवीं सदी तक जारी रही। इसमें इब्नुश्शातिर का सूरया में किया गया काम काफ़ी अहम है। इसी तरह मेडिकल साइंस में इब्नुननाफ़िस और शरफ़ुद्दीन साबूनजी ओग़ली और सोशल साइंस में इब्ने ख़लदून का मुक़द्दमा -1370- काफ़ी अहमियत रखते हैं। मुक़द्दमा ख़ुद इस तरफ़ इशारा करता है कि जब साइंस इराक़, स्पेन और पश्चिम में ख़ातमे की कगार पर थी तो दूसरी तरफ़ वह ईरान, मिस्र और शाम में फल-फूल रही थी।

साइंसी गिरावट की आम वजहों में से एक यह बताई जाती है कि कट्टरपंथी अशअरी फ़िरक़े ने अक़ली मोतज़िली फ़िरक़े को चैलेंज करना शुरु कर दिया था और इस सिलसिले में अल-ग़ज़ाली की किताब 'तहाफ़तुल फ़लास्फ़ा' (The Incoherence of the Philosophers) अहम है। मार्डन तहक़ीक़ ने इस नज़रिये पर भी सवाल उठाया है और कुछ स्कॉलर्स ने बयान किया है कि अशअरी फ़िरक़ा साइंस की हिमायत करता था मगर सिर्फ़ ख़याली फ़लसफ़े Speculative Philosophy को बुरा कहता था। साथ ही इन स्कॉलर्स का कहना है कि कुछ नामवर मुस्लिम साइंटिस्ट्स जैसे इब्नुल हैसम, अल-बीरूनी, इब्नुन्नाफ़िस और इब्ने ख़लदून ख़ुद अशअरी फ़िरक़े से ही थे। इसके अलावा शिया और सुन्नी मुसलमानों में इख़्तेलाफ़, ग्यारहवीं और तेरहवीं सदी के बीच सलीबी जंगों और मंगोलों के हमलों को मुस्लिम साइंसी ज़वाल का ज़िम्मेदार समझा जाता है। मंगोलों ने मुस्लिम लाइब्रेरियाँ, एनॉटामिकल इंस्टिट्यूट्स, हास्पिटल्स, युनिवर्सिटियाँ और अब्बासी दारुल ख़िलाफ़त बग़दाद सब तबाह कर डाला था। यहाँ जाकर मुस्लिम सुनहरी दौर का ख़ातमा हुआ।

तेरहवीं सदी से कुछ मुसलमान यह सोचने लगे कि सलीबी जंगें और मंगोलों के हमले उन पर ख़ुदा की तरफ़ से अज़ाब हैं क्योंकि वह सुन्नत को भुला चुके हैं। इब्नुन्नाफ़िस जैसा कई उलूम का माहिर भी इसी नज़रिये का क़ाएल था। ऐसे ख़यालात और बहुत सी जंगों और अंदुरूनी मसलों ने एक ऐसा माहोल पैदा किया जिसने मुस्लिम साइंस को पहले की तरह फलने-फूलने नहीं दिया। इस गिरावट की एक और वजह जिसको इब्ने ख़लदून तास्सुब कहकर पुकारता है, कल्चर्स के उतार-चढ़ाव, जंग और जीत के बारे में है। उसके मुताबिक़ इस गिरावट की वजह मज़हबी नहीं, महज़ पॉलिटिकल और फ़ाइनेंशल है।

पाकिस्तानी मुस्लिम फ़्लॉस्फ़र हम्माद यूसुफ़ लिखते हैं कि...

मुस्लिम सुनहरी दौर के ख़ात्मे की अहम वजह तसव्वुफ़ Sufism है। जब मुसलमान तसव्वुफ़ से जुड़े तो उसका उनकी एजुकेशनल एक्टिविटीज़ पर गहरा असर पड़ा।

1492 में मुसलमानों की स्पेन में हार के बाद इस्लामी दुनिया के साइंटिफ़िक और टेक्नॉलोजिकल जज़्बे को यूरोपियों ने अपना लिया और उन्होंने यूरोपी तरक़्क़ी और साइंसी इंक़ेलाब की बुनियाद रखी।

■ रज़ा फ़रहादियान

परवरिश के 3 बुनियादी उसूल

1- तौहीद और ख़ुदापरस्ती

हमारे अक़ीदों के बुनियादी उसूलों में से जिस उसूल को हमारी आइडियालोजी और सोच पर हावी होना चाहिए, वह ख़ुदा की तरफ़ तवज्जो, उसकी याद और उसका ज़िक्र है। हमें हमेशा ख़ुदा को अपने आमाल पर नज़र रखने वाला और ज़िंदगी के सारे पलों में यानी घर, स्कूल, दफ़्तर, बाज़ार...यानी हर जगह और हर हाल में ख़ुद को अपने परवरदिगार के सामने महसूस करना चाहिए। सिर्फ़ वही हमारी ज़िंदगियों पर असर डालने वाला होना चाहिए। हमारी सारी कोशिशें हमारा किरदार और हमारे काम और हमारी बातें सब कुछ ख़ुदा ही के लिए होना चाहिए। इस तरह न कोई ग़लत काम हमसे होगा और न ही हम किसी गुनाह के शिकार होंगे। इस बात से लापरवाही की वजह से ही इंसान राहे रास्त से भटक जाता है और ख़ुदा की याद को छोड़कर अपनी दुनियावी ख़्वाहिशों और फ़ायदों को पूरा करने के रास्तों पर चल निकलता है।

2- तक़वा

इन्सान के आमाल और उसके किरदार की बुनियाद "तक़वा" पर होनी चाहिए क्योंकि ख़ुदा के नज़दीक सबसे ज़्यादा इज़्ज़त उसी की है जो सबसे ज़्यादा मुत्तक़ी और परहेज़गार हो। तक़वा यानी ख़ुद को बुराईयों और गुमराहियों से बचाना, नफ़्स की मुख़ालिफ़त करना और ख़ुदा को हर वक़्त नज़र में रखना।

3- दुनिया में आज़माईश

इन्सान इस दुनिया में "कमाल और परफ़ेक्शन" हासिल करने के लिए पैदा किया गया है। दुनिया में उसकी ज़िंदगी अपने अख़लाक़ को संवारने और अपनी सलाहियतों को परवान चढ़ाने के लिए है जो एक ऐसा दौर है जिसका नतीजा आख़िरत में ज़ाहिर होगा।

इसी वजह से तमाम नेमतें और तमाम बलाएं इंसान की आज़माईश के लिए हैं। इसलिए न दुनिया की ख़ुशियों (नेमतों) पर जान छिड़कना चाहिए और न ही उसकी मुश्किलों (बलाओं) पर घबराना चाहिए बल्कि पेश आने वाले तमाम वाक़ेआत को तरक़्क़ी, कामयाबी और ह्युमन वैल्यूज़ को हासिल करने का ज़रिया मानना चाहिए।

मुश्किलों के मुक़ाबले में सब्र व बर्दाशत का दामन हाथ से नहीं छोड़ना चाहिए और ख़ुशियों के मौक़ों पर ग़ुरूर व तकब्बुर का शिकार नहीं होना चाहिए।

अगर मां-बाप इन तीन उसूलों पर अमल करें तो उनके बच्चों के किरदार में साफ़ फ़र्क़ दिखाई देगा। वह एक इंसानी और इलाही किरदार वाले हो जाएंगे क्योंकि ख़ुद तहज़ीब पाने वाले होंगे।

परवरिश की ज़िम्मेदारी

माँ-बाप अपने बच्चों की परवरिश के ज़िम्मेदार हैं। पैग़म्बरे अकरम[स०] फ़रमाते हैं, "अपने बच्चों की अच्छी परवरिश करो। बेशक तुमसे उनके बारे में सवाल होगा।"

इमाम ज़ैनुल आबिदीन[अ०] फ़रमाते हैं, "बच्चे का हक़ तुम पर यह है कि उसे अपना ही हिस्सा समझो,... उसकी अच्छी परवरिश, उसकी ख़ुदा की तरफ़ रहनुमाई और उसके अहकाम की पैरवी के बारे में तुम से पूछताछ होगी। इसलिए इस सिलसिले में तुम्हारा अमल उस शख़्स की तरह होना चाहिए जिसको पता हो कि नेकी करने पर उसे अज्र और गुनाहों व बुराईयों पर अज़ाब दिया जाएगा।"

इमाम सज्जाद[अ०] सहीफ़-ए-सज्जादिया में फ़रमाते हैं, "ऐ ख़ुदा! अपने बच्चों की परवरिश करने में मेरी मदद फ़रमा।" रसूले इस्लाम[स०] ने फ़रमाया है, "ऐ लोगो! तुम अपने मातहेत लोगों के निगेहबान हो और उनके बारे में तुमसे पूछताछ होगी। जो शख़्स अपनी और दूसरों की भलाई कर रहा हो वह उस शख़्स की तरह नहीं है जो सिर्फ़ अपनी भलाई में लगा हुआ हो, और जो दूसरों की ख़ातिर मुश्किलों को सहन करता हो वह उस शख़्स की तरह नहीं है जो आराम और इत्मिनान में ज़िंदगी बसर करे। घर वालों और बच्चों की ख़ातिर मुश्किलों को बर्दाशत करना ख़ुदा की राह में जिहाद के बराबर है।"

इस रिवायत से मालूम होता है कि माँ-बाप को अपने बच्चों के हक़ की अदाएगी में लापरवाह नहीं होना चाहिए और न ही बच्चों की परवरिश करने से अपने आपको अलग समझना चाहिए।

घर और स्कूल

बच्चों की परवरिश की ज़िम्मेदारी सिर्फ़ मां-बाप या सिर्फ़ स्कूल पर ही नहीं है बल्कि यह स्कूल और माँ-बाप के बीच एक म्युचुअल ज़िम्मेदारी है। हमारे बच्चे उसी वक़्त अच्छी एजुकेशन और अच्छी परवरिश से फ़ायदा उठा सकेंगे जब घर और स्कूल दोनों अपनी ज़िम्मेदारियों को महसूस करें, आपस में एक-दूसरे के साथ चलकर अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा कर रहे हों और बच्चे की परवरिश में एक जैसा रोल अदा करें।

अगर स्कूल और घर में एक जैसी परवरिश न हो तो बच्चा कन्फ़्यूज़्ड हो जाता है। इसलिए एक स्कूल उसी वक़्त कामयाब हो सकता है जब उसे घर की मदद और सपोर्ट हासिल हो। स्कूल का तरबियती प्रोग्राम चाहे कितना ही स्टैंडर्ड क्यों न हो, घर के सपोर्ट और मदद के बग़ैर फ़ायदेमंद साबित नहीं हो सकता।

माँ-बाप स्कूल के एजुकेशनल और तरबियती सिस्टम के साथ चलकर अपने बच्चों की रहनुमाई और तरक़्क़ी के लिए एक अच्छा नमूना बन सकते हैं। अगर यह सपोर्ट न हो और माँ-बाप अपना

घरेलू सिस्टम स्कूल के सिस्टम से अलग बनाएं तो बच्चे सही राह के चुनने में कन्फ़्यूज़्ड और मुश्किलों का शिकार हो जाएंगे। जैसे टीचर स्कूल में बच्चे से कहता है कि बाल छोटे करवाकर आना लेकिन घर में माँ उसके बालों की ख़ूबसूरती की वजह से उसकी मुख़ालिफ़त करे तो ऐसे मौक़े पर बच्चा कन्फ़्यूज़्ड हो जाएगा और टीचर की पूछताछ से बचने के लिए झूठ का सहारा लेने पर मजबूर होगा।

स्कूल से पहले घर

परवरिश के बारे में की गई रिसर्च बताती है कि माँ-बाप के बीच हर वक़्त की लड़ाई, नोक-झोंक और एक दूसरे पर ऐतराज़ों से बच्चे पर बहुत बुरे असर पड़ते हैं। इसलिए ज़्यादातर ऐसा होता है कि मुश्किलें पैदा करने की वजह बच्चे नहीं बल्कि ख़ुद माँ-बाप होते हैं।

माँ-बाप के बीच झगड़ा घर का सिस्टम तबाह कर देता है। घर का ख़ुशगवार माहौल मैदाने जंग में बदल जाता है। कभी-कभार यह भी देखने में आता है कि माँ-बाप में से हर एक बच्चों को एक दूसरे के ख़िलाफ़ भड़काता है और चूंकि बच्चा हक़ीक़त को पहचानने के लाएक़ नहीं होता इसलिए स्ट्रेस और परेशानी में फंस जाता है और इन दोनों की और दूसरों की चापलूसी और ख़ुशामद में लगा रहता है। कभी-कभी तो वह माँ-बाप के इस आपसी झगड़े की वजह से घर और फ़ैमिली से भी दूर हो जाता है।

बच्चे को प्यार-मोहब्बत की ज़रूरत है और उसकी यह ज़रूरत माँ-बाप के ज़रिए पूरी होती है। अगर माँ से बच्चे को प्यार-मोहब्बत न मिले तो बच्चा सख़्त ज़ेहनी दबाव का शिकार हो जाता है। ऐसे बच्चे फ़्यूचर में जब घर बसाते हैं तो लाइफ़-पार्टनर के साथ ख़ुशगवार ताअल्लुक़ात नहीं बना पाते। यहां तक कि आगे चलकर किसी भी ज़िम्मेदारी को क़ुबूल करके मुश्किलों का शिकार हो जाते हैं। ख़ुलासा यह कि माँ-बाप में अंडर-स्टैंडिंग, सपोर्ट और मोहब्बत बच्चे की तरक़्क़ी का एक अहम फ़ैक्टर है।

जिस घर में माँ-बाप के बीच आपसी झगड़ों और लड़ाइयों का राज हो उसमें बच्चों से किसी सपोर्ट, मदद या दोस्ती की उम्मीद करना बेकार है। माँ-बाप के बीच अगर ज़िंदगी के कुछ मसलों पर इख़्तेलाफ़ भी हो तो उन्हें चाहिए कि अपने बच्चों के सामने इन मसलों पर बहस न करें क्योंकि उसको बच्चा बर्दाशत नहीं कर सकेगा। उनका यह अमल उसको परेशानी में डाल देगा और वह अपना सुकून खो बैठेगा। दूसरी तरफ़ इस आपसी झगड़े से माँ-बाप का ध्यान बच्चों पर से ख़ुद बख़ुद कम हो जाएगा।

अगर माँ-बाप के बीच ख़ुशगवार और मोहब्बत भरे ताअल्लुक़ात हों तो बच्चा भी यह बात सीखता है कि दूसरों से मुहब्बत करनी चाहिए और अपने कामों में दूसरों की राय का एहतेराम करते हुए उन्हें अपने साथ शरीक करना चाहिए।

इन हालात में उसके लिए म्युचुअल अंडरस्टैंडिंग और सर्पोटिव माहोल में ज़िंदगी बसर करना आसान हो जाएगा। अगर माँ-बाप एक दूसरे की इज़्ज़त करेंगे तो बच्चे भी एक दूसरे की और माँ-बाप की इज़्ज़त करेंगे।

माँ-बाप को चाहिए कि अपने बच्चों की तमाम बातों को अच्छी तरह से सुनें क्योंकि स्कूल में बच्चे को इतना वक़्त नहीं मिलता कि वह अपने तमाम ख़्यालों और नज़रियों को बयान कर सके। इस सिलसिले में उन्हें चाहिए कि पूरी अंडरस्टैंडिंग के साथ बच्चों को अपनी शख़्सियत के एक्सपोजर का मौक़ा दें और उनकी सलाहियतों और क्वालिटीज़ को निखारने के लिए एक अच्छा माहोल बनाएं।

आपसी झगड़ों के रिज़ल्ट्स

माँ-बाप के बीच झगड़े बच्चों पर बहुत बुरे असर डालते हैं जिनमें से कुछ यह हैं:-

1- बच्चा सोशल प्रोग्राम्स में हिस्सा लेने से भागने लगता है क्योंकि उसे घर में अपनी शख़्सियत के एक्सपोजर का मौक़ा नहीं मिलता।

2- ज़्यादातर परेशान और स्कूल में बुझा-बुझा सा रहता है।

3- अपनी एजुकेशन से Enjoy नहीं कर पाता और फ़्यूचर से डरता रहता है।

ज़ेहनी गुलामी

■ आर. ज़ेड. चौधरी

एक वक़्त था जब दुनिया में इन्सानों की जिस्मानी गुलामी का चर्चा आम हुआ करता था। इन्सानों की भी मंडियाँ लगती थीं और उन पर भी बोलियाँ लगाई जाती थीं। मज़हब से हटकर, समाज से हटकर इन्सानों को सरे आम ख़रीदा और बेचा जाता था और ऐसा सिलसिला कई ज़मानों तक चलता रहा।

इन्सानों की जानवरों की तरह इस ख़रीदो फ़रोख़्त पर ह्युमन राइट्स की नाम भर की NGOs हरकत में आई, लोगों में शऊर पैदा किया गया और आहिस्ता-आहिस्ता जिस्मानी गुलामी का सिलसिला रुकता गया और फिर वह दौर आख़िरकार ख़त्म हुआ।

अब एक नया दौर है, एक ऐसा दौर जिसमें लोगों के पास इल्म और शऊर भी है। इस दौर में इन्सान ने तरक्क़ी भी की है मगर उसकी एक ख़्वाहिश वैसी की वैसी ही रही यानी "दूसरे इन्सानों पर अपना हुक्म चलाना"।

इस मार्डन इंसानियत ने सोचा कि अब इन्सान की जिस्मानी गुलामी तो हो नहीं सकती इसलिए कोई ऐसा तरीक़ा और कोई ऐसा रास्ता सोचा जाए जिस से इन्सान की हैवानियत वाली ख़्वाहिश भी पूरी हो जाए और दुनिया उस पर उंगलियाँ भी न उठाए। बस फिर क्या था, इंसानियत के शातिरों ने इन्सानों को ज़ेहनी गुलाम बनाना शुरु कर दिया।

इस तरह ज़ेहनी गुलामी का दौर शुरु हो गया जो आज के दौर में अपनी बुलन्दियों पर है।

क्या है ज़ेहनी गुलामी.....? "ज़ेहनी गुलामी जिस्मानी गुलामी से कहीं बदतर और ख़तरनाक है जिसमें इन्सान दुनिया की नज़रों में आज़ाद इन्सान कहलाते हैं। ज़ाहिर में तो आज़ाद ज़िंदगी गुज़ारते है मगर हक़ीक़त में वह बड़े मजबूर होते हैं। उनकी सोच और उनका अमल तरह-तरह के ऑर्डर्स और पाबंदियों में जकड़ा होता है।"

सबसे अहम बात यह है कि जिस्मानी गुलामी में इन्सान को गुलाम बनने पर मजबूर किया जाता है। मगर ज़ेहनी गुलामी में इन्सान ख़ुद अपनी मर्ज़ी से ही दूसरों के इशारों पर नाचता है। बिल्कुल ऐसे ही जैसे कठ-पुतली तमाशे में, नाचती तो पुतलियाँ है, मगर डोरें किसी और के हाथ में होती हैं।

इस शातिर इंसानियत ने ऐसे नए-नए तरीक़े ढूँढने शुरु किए कि इन्सान उन्हीं की तरफ़ खिंचा चला गया। उसने इन्सान को,

"समाज को भूलकर बस ख़ुद को आगे बढ़ाने का तरीक़ा बताया।"

"समाज के फ़ायदे के बजाए सिर्फ़ अपने फ़ायदों को आगे रखना सिखा दिया।"

"इल्म के बजाए दौलत की लालच सिखा दी।"

"दूसरों के लिए अपनी जान देने के बजाए ख़ुद को ज़िंदा रखने के लिए दूसरों को मारना सिखा दिया।"

"मज़हब को प्राइमरी के बजाए सेकेंड्री दर्जे पर ला खड़ा किया।"

"मज़हब पर सीधा चलने के बजाए उसके नाम पर ऐसे तरीक़े निकाले जिसने शैतानियत को आम कर दिया और जिसने उसको शैतान के बताए हुए रास्ते पर चलना सिखा दिया।"

जो-जो लोग इस शातिर इन्सानियत के बताए हुए रास्तों पर चलते गए, चाहे वह किसी भी मज़हब से थे, वह ज़ेहनी तौर पर गुलाम बनते गए।

जिसमें सबसे बड़ी तादाद मुसलमानों की है जो एक बेहतरीन मज़हब रखने के बावजूद, इन्हीं रास्तों पर चलते गए और आख़िर में आज के दौर में जो बदतरीन ज़ेहनी गुलामी का शिकार हैं। ●

4- घर में प्यार मुहब्बत की कमी की वजह से पढ़ाई में बच्चा पीछे रह जाता है।

5- घरेलू मुहब्बत से दूर होने की वजह से यह बच्चा बहक जाता और ग़लत एक्टिविटीज़ के चंगुल में फंस जाता है।

6- ज़्यादातर घरेलू मुश्किलों और माँ-बाप के झगड़ों के बारे में सोच-सोच कर उलझा रहता है।

7- अपने माँ-बाप के एहतेराम और इज़्ज़त का क़ायल नहीं रहता और इस तरह समाज के हर आदमी से बदगुमान हो जाता है।

क्या करना चाहिए?

1- किसी भी सूरत में माँ-बाप को बच्चों के सामने लड़ाई झगड़ा और एक दूसरे की बुराई नहीं करनी चाहिए।

2- माँ-बाप घर में होने वाली बातचीत में ऐसी चीज़ों से बचें जिनसे बच्चों में लालच व हवस और दूसरों की ग़ीबत करने का रुजहान पैदा हो।

3- माँ-बाप को चाहिए कि अपनी ख़्वाहिशों को अपनी मर्ज़ी और दूसरों के मुताबिक़ ढालने के बजाए ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ढालें।

4- एक दूसरे के साथ हुस्ने ज़न रखें और एक-दूसरे को अच्छी निगाह से देखें।

5- एक दूसरे को ऐसे अलफ़ाज़ से पुकारें जिनसे एहतेराम झलकता हो। एक दूसरे के लिए तौहीन भरे जुमले इस्तेमाल करने से परहेज़ करें।

6- ज़माने से गिला शिकवा न करें और तक़दीर पर राज़ी रहें क्योंकि अक्सर गिले शिकवे न चाहते हुए भी बच्चों की ज़िंदगी को निगेटिव सोच से दो चार कर देते हैं और उसकी सोच निगेटिव हो जाती है।

7- घरेलू मसलों के सिलसिले में हर हफ़्ते एक दिन आपसी बातचीत और एक-दूसरे की बातें सुनने के लिए तय रखें और बच्चों के सामने मशवेरा और कनवर्सेशन करें। ●

साइंस में मुसलमानों की देन

सै. आलिम हुसैन रिज़वी
रिटायर्ड असिस्टेंट जनरल मैनेजर
युनियन बैंक, वाराणसी

पश्चिमी मुल्कों की हुकूमतें और मीडिया इस बात को हवा देते हैं कि मुसलमानों में अपने दौर में न तो कोई दुनिया के अलग-अलग इल्मों को ईजाद करने वाला पैदा हुआ और न ही उस ज़माने में कोई साइंटिस्ट पैदा हुआ। यह दरअसल पश्चिमी मुल्कों की धांधली और मुसलमानों के लिए उनका तअस्सुब है जिसके तहत ऐसा प्रोपेगंडा किया जाता है और हिन्दुस्तानी प्रेस और मीडिया चूँकि उनकी बात को आँख मूँद कर सच मानता है इसलिए बिना कोई रिसर्च किए उनकी बात को मान लेता है जबकि हक़ीक़त इसके उलट है। हक़ीक़त तो यह है कि बहुत से दुनियावी इल्मों को ईजाद करने वाले मुसलमान ही थे लेकिन यूरोप वालों ने गुमराह करने के लिए और सारा क्रेडिट खुद लेने के लिए उनका नाम इस तरह बदल डाला कि कोई समझ ही न सके कि यह लोग मुसलमान थे।

अपनी बात के सुबूत में हम कुछ हस्तियों के बारे में यहाँ लिख रहे हैं जो मुसलमान थे और उन्होंने अपनी ईजाद से यूरोप के इल्मी अंधेरे में रौशनी फैलाई:

1- अबुल क़ासिम अल-ज़हरावी

ज़हरावी को फॉदर ऑफ़ मॉर्डन सर्जरी कहा जाता है। इनकी पैदाइश 936 ई० और मौत 1013 ई० मे हुई थी। इनको यूरोप वाले Abul Casis कहते हैं। उनका तीस वॉल्यूम्स का मेडिकल इन्साइक्लोपीडिया ''किताब अत्तसरीफ़'' के नाम से पब्लिश हुआ जो मुस्लिम और यूरोपियन यूनिवर्सिटियों में सोलहवीं सदी तक Standard Text Book के तौर पर पढ़ाया जाता रहा। इस किताब ने सबसे पहले प्लास्टा, साँस के ज़रिए लेने वाली बेहोशी का सामान Anasthesia और सर्जरी में काम आने वाले दूसरे औज़ारों से पहचान कराई।

2- अबू अली अलहुसैन बिन अब्दुल्लाह बिन सीना

यह बू अली सीना के नाम से मशहूर हैं। यूरोप वाले इन्हें Avicenna (अवीसेना) कहते हैं। यह 980 ई० में पैदा हुए और 1037 ई० में इनका इंतेक़ाल हो गया। उन्हें फ़िज़िक्स में फ़ंडामेंटल कॉन्सेप्ट ऑफ़ मोमेन्टम का बानी माना जाता है। उन्हें Modern Medicine का भी बाबा आदम माना जाता है। उनकी दूसरी ईजादें यह हैं:

(1) Chemistry & Engineering: बू अली सीना ने हवा के थर्मामीटर को ईजाद किया साथ ही Steam Distillation के Chemical Process की ईजाद भी की।

(2) Physics & Mechanics: उन्होंने Concept of Momentum को ठोस शक्ल दी। इस नज़रिये ने न्यूटन के Second Law of Motion में Concept of Momentum के लिए रास्ता साफ़ किया। इनका हरकत का नज़रिया Theory of Motion न्यूटन के First Law of Motion में दिए गए जम जाने (हरकत बंद हो जाने) के Concept of Inertia से बहुत मेल खाता है।

(3) Medicine, Pathalogy & Physiology: बू अली सीना ने चौदह वॉल्यूम्स का मेडिकल इन्साइक्लोपीडिया Canon of Medicine लिखा जो सत्तरहवीं सदी तक मुस्लिम और यूरोपियन युनिवर्सिटियों में Standard Text Book के तौर पर रहा।

3- अबू रेहान अल-बीरूनी

अल-बीरूनी को ज़मीन की नाप के इल्म Geodesy का फ़ॉदर कहा जाता है। और एक दम शुरु के Geologists में से एक माना जाता है। अल-बीरूनी की पैदाइश 1000 ई० में हुई और 1048 ई० में उनका इंतेक़ाल हुआ। उनकी ईजादें यह हैं:

(1) Geography: अल-बीरूनी ने ज़मीन की ऊपरी सतह और उनकी अलग-अलग दूरियाँ

मरयम
Sep 2012
Monthly Coupon
ड्रॉ में शामिल होने के लिए
10 कूपन जमा करके हमें भेजिए।

आप भी मरयम के लिए आर्टिकिल भेज सकती हैं...

1. A4 साईज़ पर लिखा हो।
2. पेपर के एक साईड पर लिखा हो।
3. पहले कहीं छपा न हो।
4. आर्टिकिल की ओरिजिनल कॉपी भेजिए।
5. भेजे गए आर्टिकिल्स एडिटोरियल बोर्ड से पास होने के बाद ही पब्लिश किए जाएंगे।
6. आर्टिकिल रिजेक्ट होने पर उसकी वापसी नहीं होगी।
7. आर्टिकिल सिलेक्ट हो जाने के बाद अपने मुनासिब वक़्त पर पब्लिश किया जाएगा।
8. आर्टिकल में एडिटर को बदलाव का हक़ होगा।

नापने की तकनीक ईजाद की। उन्होंने ज़मीन का Radius 6339.6 km नापा जो सोलहवीं सदी तक बिल्कुल सही था।

(2) Astronomy: अल-बीरूनी पहले साइंटिस्ट थे जिन्होंने आसमान पर दिखाई देने वाली चीज़ों (Astronomical Phenomenon) के बारे में तजुर्बात करने शुरु किए। उन्होंने पता लगाया कि Milky Way Galaxy अनगिनत सितारों का झुरमुट है।

(3) Engineering, Mechanics & Physics: अल-बीरूनी ने सबसे पहले इसको जाना कि तेज़ रफ़्तार (Acceleration) का अमल बेक़ायदा हरकत (Non-Uniform Motion) से जुड़ा है। उन्होंने लेबोरेट्री के बहुत से आलात ईजाद किए।

4- जाबिर बिन हय्यान

यूरोपियन इन्हें Geber के नाम से जानते हैं। उन्हें Father of Chemistry कहा जाता है। यह 715 ई० में पैदा हुए और 800 ई० में इनका इंतेक़ाल हुआ। यह इमाम जाफ़रे सादिक़[अ०] के ख़ास शागिर्द थे। इनकी ख़ास ईजादें यह हैं:

(1) यह पहले केमिस्ट थे जिन्होंने Sulphuric Acid और दूसरे Chemical Substances बनाए। साथ ही लेबारेट्री के कई आलात बनाए।

(2) उन्होंने Nitric Acid पर एक किताब "किताब अल-इस्तितमाम" लिखी जिसका लैटिन ज़बान में Summa Perfectionist के नाम से हुआ।

(3) उन्होंने सबसे पहले Transmulation of Metals और लेबारेट्री में Artificial Creation of Life के नज़रिये को पेश किया।

(4) उन्होंने धातु और ऑक्सीजन के माद्दे (Metallic Oxide) जैसे Manganese Dioxide (Magnesia) वग़ैरा को छोटी मिक़दार में मिलाकर शीशे को रंगीन करने का तरीक़ा पेश किया। यह Glass Industry में एक तरक़्क़ी वाला इज़ाफ़ा था जिसका पहले लोगों को इल्म नहीं था।

5- अबू जाफ़र मोहम्मद इब्ने मूसा अल-ख़्वारज़मी

ख़्वारज़मी ने Maths के मैदान में "हिसाब अल जब्र वल मुक़ाबिला" को पेश करके दुनिया को एक नये इल्म की पहचान कराई जो उनके ही दिये नाम अल-जब्र में A का इज़ाफ़ा करके Al-Gebra के नाम से मशहूर हुआ जो आज Mathmatics का एक हिस्सा है।

ख़्वारज़मी ने Geography पर बहुत काम किया जिसके ज़रिये 2402 इलाक़ों की लम्बाई-चौड़ाई (Latitude & Longitude) को पेश किया जो दुनिया का नक़्शा बनाने में बहुत काम आया।

अगर इतना सब कुछ होने के बाद भी कोई कहे कि मुसलमानों की दुनियावी इल्म में कोई हिस्सेदारी नही तो इसे सिर्फ़ धांधली और मुसलमानों के साथ नाइंसाफ़ी नहीं कहा जाएगा तो क्या कहा जाएगा। ●

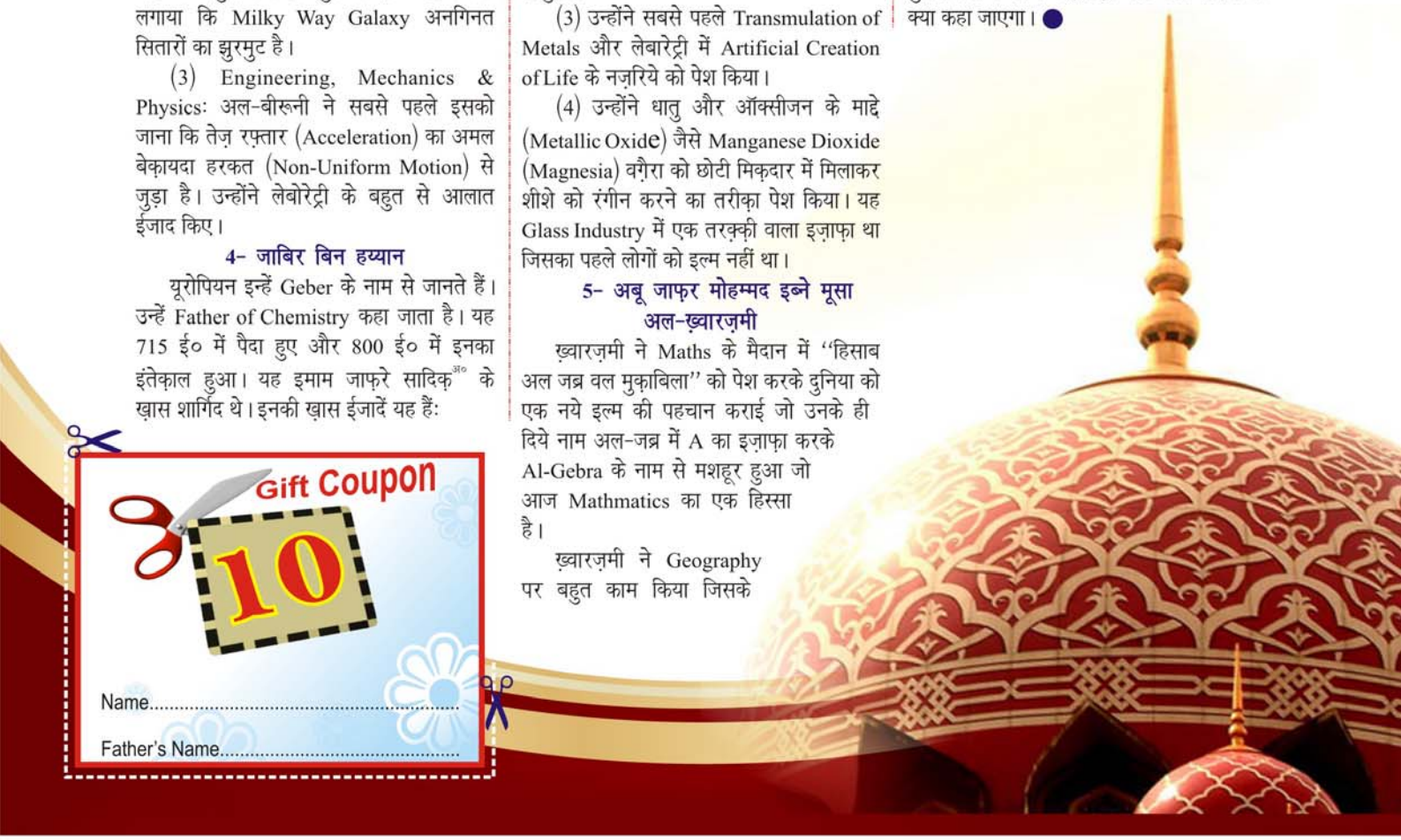

Gift Coupon

10

Name.....

Father's Name.....

GULSHAN

MEHANDI & HERBALS

IRFAN ALI PRADHAN
403 & 404, A Block
REGALIA HEIGHTS
Ahmadabad Palace Road
KOHE-FIZA
BHOPAL (M.P.) 462001, INDIA.
+919893030792, +917554220261

MOHTARMA "GULSHAN"
G-1, Krishna Apartment
Plot No. 2, Firdaus Nagar
Bairasia Road, BHOPAL
+91-755-2739111

RNI No: UPHIN/2012/43577

मरयम

की तरफ़ से

हम आपके घर लेकर आए हैं ख़ूबसूरत और क़ीमती

तोहफ़े

पहला इनाम	:	उमरा
दूसरा इनाम	:	फ़्रिज
तीसरा इनाम	:	माइक्रोवेव
चौथा इनाम	:	मोबाईल सेट
पांचवां इनाम	:	डिनर सेट
छटा इनाम	:	ज्वैलरी
सातवां इनाम	:	मिक्सर
आठवां इनाम	:	पंखा
नवां इनाम	:	लेमन सेट
दसवां इनाम	:	घड़ी

दिसम्बर 2011 से मरयम में हर महीने एक कूपन छपेगा।
10 कूपन जमा करके मरयम की तरफ़ से दी जाने वाली आख़िरी तारीख़ तक कूपन भेजने वालों में से ड्रॉ के ज़रिए 10 लोगों को सिलेक्ट करके इनाम दिए जाएंगे।
अगर आप मरयम के सब्सक्राईबर नहीं हैं तो जल्दी कीजिए।
ख़ुद भी सब्सक्राईब कीजिए और अपने रिश्तेदारों व दोस्तों को भी सब्सक्राईब कराईए और इस स्कीम से फ़ाएदा उठाने का मौक़ा हाथ से मत जाने दीजिए!

नियम व शर्तें:

1. मरयम में हर महीने अलग-अलग तरह के कूपन छापे जाएंगे। दिसम्बर 2011 से नवम्बर 2012 तक 10 कूपन जमा करके भेजने वालों को ही इस ड्रॉ में शामिल किया जाएगा।
2. मरयम की टीम का फ़ैसला ही आख़िरी होगा और इस बारे में किसी को कोई एतेराज़ का हक़ नहीं होगा।
3. इस सिलसिले में किसी भी तरह की अदालती कार्यवाई सिर्फ़ लखनऊ की अदालत में ही की जा सकेगी।

Contact No.:
+91-522-4009558
+91-9956620017 (Lucknow)
+91-9892393414 (Mumbai)
maryammonthly@gmail.com